# सुनियोजित एवं वैधिक लूट

## नोटबंदी के एक साल का सिंहावलोकन

संकलन

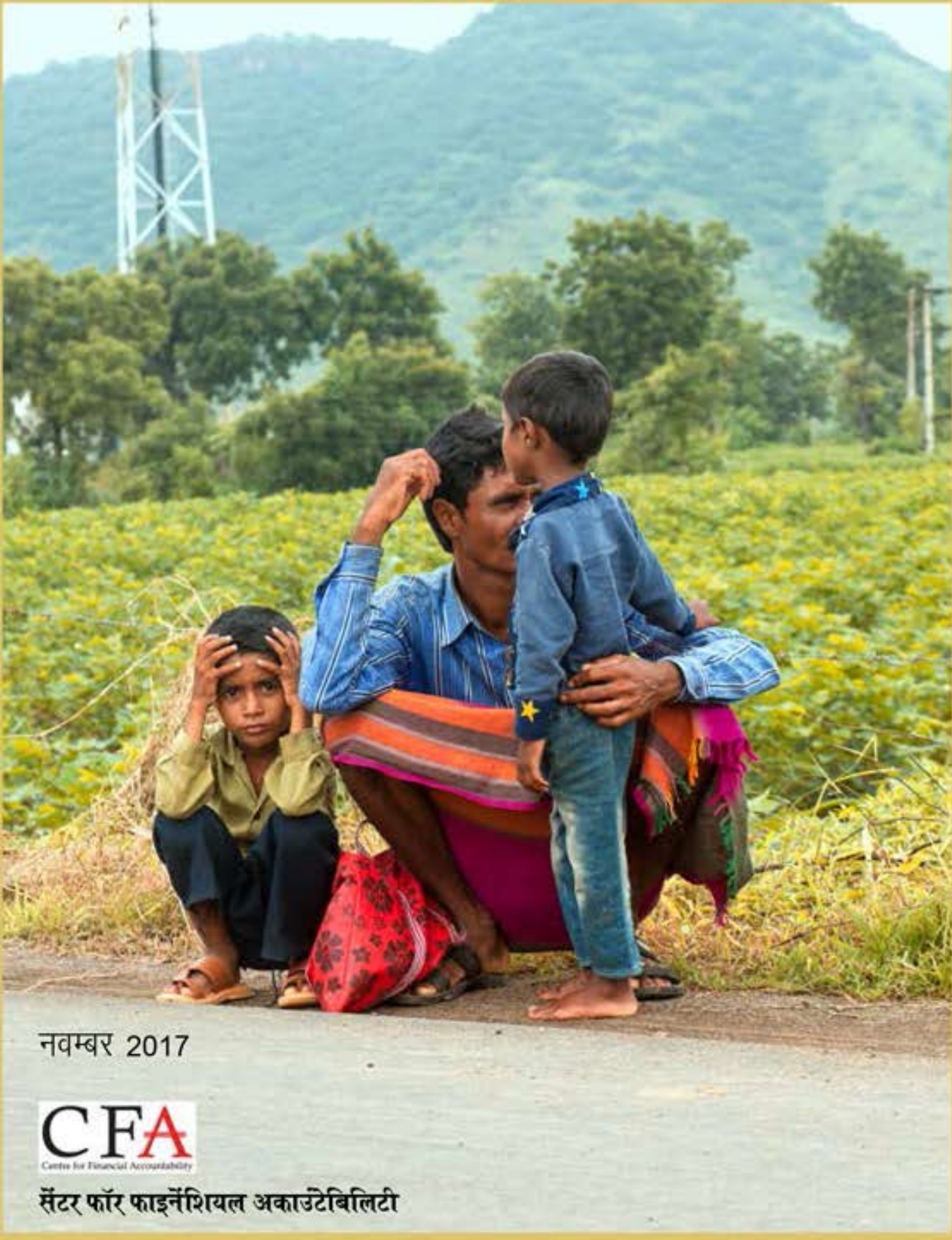

नवम्बर 2017

CFA
Centre for Financial Accountability

सेंटर फॉर फाइनेंशियल अकाउंटेबिलिटी

# सुनियोजित एवं वैधिक लूट

---

## नोटबंदी के एक साल का सिंहावलोकन

संकलन

Centre for Financial Accountability

सेंटर फॉर फाइनेंशियल अकाउंटेबिलिटी

नवम्बर, 2017

प्रकाशक : सेंटर फॉर फाइनेंशियल अकाउंटेबिलिटी

सेंटर फॉर फाइनेंशियल अकाउंटेबिलिटी (सीएफ़ए) शोध और अभियान के द्वारा ऐसी वित्तीय संस्थाओं, जो विकास की परियोजनाओं पर पैसा लगाती हैं, में पारदर्शिता और जवाबदेही लाने के लिए काम करती है, और यह उन वित्तीय नीतियों का विश्लेषण करती है, जिनसे उन संस्थाओं की कार्यशैली का मार्गदर्शन होता है।

पता : R-21, साउथ एक्सटेंशन – 2, दिल्ली – 110049

फ़ोन : +91-11-49123696

ईमेल : info@cenfa.org
वेबसाइट : http://www.cenfa.org
संकलन : माधवी बंसल और प्रिया दर्शिनी

कवर डिज़ाइन: जो अत्याली

लेआउट: एयुएस इंटरप्राइजेज

प्रिंटर : जेएसए इंटरप्राइजेज

नवम्बर, 2017

कॉपीलेफ्ट : इस पुस्तिका को पाठक गैर-वाणिज्यिक उद्देश्यों के लिए बिना रोक टोक के इस्तेमाल कर सकते हैं, बशर्ते स्रोत को उद्धृत किया गया हो।

निजी वितरण हेतु

# अनुक्रमणिका


**आभार** 5

**भूमिका** 7

1. **नोटबंदी: क्यों नक़दी पर जंग छिड़ी है (और आप इसके बीच में हैं)** 11
टोनी जोसफ

2. **नोटबंदी: ग़ैर क़ानूनी धन कहाँ, जब 99% रद्द नोट आ गए वापस - आरबीआई** 16
दिनेश उन्नीकृष्णन

3. **नोटबन्दी पोस्ट ट्रूथ** 21
प्रसेनजित बोस

4. **आर्थिक सर्वेक्षण ने स्वीकारा - नोटबंदी के बाद, अर्थव्यवस्था में सुधार अभी भी बाक़ी** 34
मयंक जैन

5. **नोटबंदी का भूत** 39
पार्थ एम. एन

6. **नोटबंदी ने बुंदेलखण्ड के मजदूर प्रवास/ के सिलसिले को तोड़ दिया है** 44
अजोय आशीर्वाद महाप्रस्थ

7. **दिल्ली के अनौपचारिक बाज़ार को ख़त्म करते वक़्त, नोटबंदी से अनौपचारिकता बढ़ी** 50
दीपांशु मोहन व ऋचा सेखानी

# आभार

कुछ लोगों की सक्रिय भागीदारी और सहायता के कारण ही हम निश्चित समय में इस पुस्तिका को संकलित व प्रकाशित करने में सफल हो पाए हैं।

हम अलग-अलग लेखों के लिए उसके लेखकों – प्रसेनजित बोस, टोनी जोसफ, पार्थ एम. एन., दिनेश उन्नीकृष्णन, अजोय आशीर्वाद महाप्रस्थ, मयंक जैन, दीपांशु मोहन व ऋचा सेखानी; और इनके मूल प्रकाशक – इकोनोमिक एंड पोलिटिकल वीकली, स्क्रोल.इन, पीपलस आर्काइव ऑफ़ रूरल इंडिया, द वायर, और फर्स्टपोस्ट.कॉम को इसके लिए धन्यवाद देते हैं, जिन्होंने तुरंत इन लेखों के अनुवाद और प्रकाशन की अनुमति दी।

उन्होंने सिर्फ़ हमें लेखों के लिए अनुमति ही नहीं दी, बल्कि इनके संकलन के लिए भी काफ़ी प्रोत्साहित किया। हम इन लेखों का अनुवाद करने वाले, रियाजुल हक़, अमित कुमार, सुभाष गताड़े, और डॉ. मोहम्मद कमर तबरेज का भी धन्यवाद करते हैं, जिन्होंने बहुत ही कुशलता के साथ इनका अनुवाद किया। अमित कुमार और राधेश्याम चौधरी ने इस संकलन के संपादन में मदद की है। जो अत्याली और राजेश कुमार ने इस पुस्तिका के संकलन के अलग-अलग चरणों में मदद की।

# भूमिका

विनाशकारी 8 नवम्बर, 2016 का वह दिन जब भारत के प्रधानमंत्री ने 500 और 1000 के नोटों को वैध करने का फैसला सुनाया था, के बाद ठीक एक साल बीत चुका है। उसी दिन जारी हुए 2652[1] नंबर गजट आदेश के अनुसार,

> "अत: अब केंद्रीय सरकार, भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934 (1934 का 2)... की धारा 26 की उपधारा (2) द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए, घोषणा करती है कि विनिर्दिष्ट बैंक नोट 9 नवंबर, 2016 से... वैध मुद्रा के रूप में नहीं रहेंगे"

इस घोषणा के साथ यह समझ पैदा की गई कि यह क़दम देश में प्रचलित काले धन, जाली नोटों, और आतंकी फंडिंग को बर्बाद कर देगा और इन्हीं कारणों को नोटबंदी का उद्देश्य भी बताया गया। इसके साथ लोगों की ज़िन्दगी में आये उथल-पुथल और आर्थिक संकट को सिर्फ़ कुछ दिनों की बात बताया गया। लेकिन, कड़वा सच यह है कि काला धन अभी भी है, नए 2000 रुपये के जाली नोट छापे जा रहे हैं और आतंकी गतिविधियों को अभी भी फंडिंग जारी है। रिपोर्ट के अनुसार, एक सौ से ज्यादा लोगों की नोटबंदी के बाद, उसके सदमे से, नए नोटों की कमी से स्वास्थ्य सुविधा नहीं ले पाने के कारण, इत्यादि, मौत हो गयी। कुछ लोगों ने बैंकों के आगे लगी लाईनों में खड़े-खड़े दम तोड़ दिया, तो कुछ ने परेशान होकर आत्महत्या कर ली। गौर करने वाली बात यह है कि, आज एक साल बाद भी लोग नोटबंदी के परिणाम से उभर नहीं पाए हैं और भारतीय अर्थव्यवस्था, नोटबंदी और उसके बाद जीएसटी के झटके से, अभी भी डांवाडोल है।

इस पुस्तिका के संकलन का अहम उद्देश्य इन्हीं बातों, मतलब नोटबंदी से लोगों के ऊपर पड़े प्रभावों, को सामने रखना है, जो अभी तक महसूस किए जा रहे हैं। यह पुस्तिका, विभिन्न जगह प्रकाशित नोटबंदी के ऊपर अंग्रेजी में लिखे गए, कुछ लेखों के हिंदी अनुवादों का संकलन है। इन महत्वपूर्ण लेखों को ज्यादा से ज्यादा लोगों तक पहुँचाने के उद्देश्य से प्रकाशित किया जा रहा है।

इसके ऊपर पूरी बहस इस सोच के साथ शुरू होती है कि नोटबंदी के पीछे का कारण, सरकार द्वारा बताये गए उद्देश्य ना होकर, 2008 में आये आर्थिक संकट के बाद नक़दी के ऊपर शुरू हुई जंग है। शुरुआत में सरकार के उद्देश्यों में "कैशलेस अर्थव्यवस्था" के बारे में चर्चा नहीं थी और जब उनके द्वारा बताये, काले धन, जाली नोटों, और आतंकी फंडिंग को ख़त्म

करने, का उद्देश्य पूरा ना हो पाना साफ़ हो गया, तब उन्होंने अपना उद्देश्य "कैशलेस अर्थव्यवस्था" कर दिया और जब वो भी विफल हो गया, तो कम नक़दी वाली अर्थव्यवस्था यानि कि "लेस-कैश अर्थव्यवस्था" पर केंद्रित कर दिया। संक्षेप में यह साफ़ हो चुका है कि नोटबंदी की नक़दी के खिलाफ जंग विफल हो चुकी है। मजबूरन, जिन लोगों को नक़दी के अभाव में डिजिटल भुगतान के माध्यम की तरफ़ जाना पड़ा था, वे नक़दी बाज़ार में आते ही वापस नक़द भुगतान पर जा चुके हैं। नेशनल पेमेंट्स कारपोरेशन ऑफ़ इंडिया (एनपीसीआई) के अनुसार, बैंकिंग में डिजिटल पेमेंट के नए उपभोक्ताओं की संख्या शुरुआत के दो महीनों में 40 मिलियन से 100 मिलियन तक पहुँच गयी थी, जबकि अप्रैल तक, उनमें से सिर्फ़ 25 मिलियन लोग उससे जुड़े रहे।

भारत में नोटबंदी लगातार बदलते उद्देश्यों की एक कहानी रही है। ऐसा कहा गया था कि लाखों करोड़ काला धन आर्थिक तंत्र में वापस आएगा। जबकि, 30 जून 2017 को जारी हुई, भारतीय रिज़र्व बैंक की वार्षिक रिपोर्ट के अनुसार नोटबंदी की चपेट में आये 15.44 लाख करोड़ रुपयों में से 98.96 प्रतिशत पैसे बैंकों में पुराने नोटों के रूप में आ चुके हैं और सिर्फ़ 16,000 करोड़ रुपये नहीं आये। इसमें भारतीय कोआपरेटिव बैंकों, नेपाल के बैंकों और भूटान के बैंकों को मिले पुराने नोटों की गिनती तब तक नहीं हो पायी थी। एक बार जब यह साफ़ हो गया कि बैंकों में लगभग सारे पैसे वापस आ गए तो सरकार ने घोषणा कर दी कि नोटबंदी का उद्देश्य, नकदी के रूप में उपस्थित काले धन को खत्म करना नहीं था।

आर्थिक सर्वेक्षण के दुसरे भाग के अनुसार, जैसे कि पुस्तिका के एक लेख में चर्चित है, यह जाहिर हो चुका है कि नोटबंदी का असर दोनों औपचारिक और अनौपचारिक क्षेत्रों पर पड़ा है और अर्थव्यवस्था अभी भी इसका परिणाम भुगत रही है।

अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं, जैसे अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (आईएमएफ़) और विश्व बैंक, ने नोटबंदी को एक कारण बताते हुए, भारत के आर्थिक विकास के अनुमान को घटा दिया है। आईएमएफ़ ने वर्ष 2017-18 और 2018-19 के लिए वृद्धि दर के अनुमान को क्रमशः 6.7% और 7.4% बताया है, जो पिछले वर्ष के अनुमान से क्रमशः 0.5% और 0.3% कम है। नोटबंदी ने ना सिर्फ़ आर्थिक वृद्धि के दर को कम किया है बल्कि इस पूरी प्रक्रिया में होने वाला ख़र्च इसके लाभ से कहीं ज्यादा हो चुका है। 2016-17 में भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा केंद्र सरकार को दिया गया लाभांश भी 2015-16 के मुकाबले आधे से ज्यादा घटकर सिर्फ़ 30,६५९ करोड़ रह गया, जिसका ज्यादातर पैसा नए नोटों को छापने की लागत में और खातों में जमा हुए पैसों पर खाताधारकों को ब्याज देने में ख़र्च हो गया।

नोटबंदी का अनौपचारिक क्षेत्रों पर सबसे ज्यादा प्रभाव पड़ा है। वहीं, बदलते हुए उद्देश्यों की श्रृंखला में, नोटबंदी से अनौपचारिक अर्थव्यवस्था को औपचारिक अर्थव्यवस्था में बदलने का उद्देश्य भी सरकार का एक और उद्देश्य था। जबकि, पुस्तिका के एक लेख के अनुसार, नोटबंदी के बाद अर्थव्यवस्था में अनौपचारिकता बढ़ी है। इसके अतिरिक्त ऐसे विभिन्न क्षेत्रों में इसका प्रभाव ज़्यादा देखने को मिला है जो ज्यादातर नक़दी पर निर्भर हैं, जैसे कि कृषि क्षेत्र, पारंपरिक कारीगर, छोटे और मध्यम उद्योग इत्यादि। इसका आम जनजीवन पर भी कोई कम असर नहीं रहा। प्रवासिय मजदूर अभी भी उभर नहीं पाए हैं, और कईओं को नोटबंदी के कारण गए रोज़गार भी, अभी तक वापस नहीं मिल पाए हैं।

बैंकों के कर्मचारियों को नोटबंदी के कारण अधिक समय तक काम करना, लाईन में खड़े गुस्साएं लोगों का सामना करना, मुद्रा कोष में पड़े कम नोटों से जूझना और साल के आखिरी में अपनी छुट्टियों का भी मजबूरन बलिदान देना पड़ा।

नोटबंदी के खिलाफ एक व्यापक रोष फैला हुआ था। विपक्षीय दल ने इसको संसद में उठाया। कई संगठनों, आम लोगों ने इसके खिलाफ प्रदर्शन किये – जैसे की विपक्षीय दलों ने नोटबंदी की घोषणा के तुरंत बाद, किसानों ने अपने उत्पाद को नोटबंदी की मार में सड़कों पर फेंक कर, लाइन में खड़े लोगों ने बैंकों के शटर को बंद करने की धमकी दे कर, गाँव के लोगों ने नोटों की कमी के खिलाफ, ग़ैर-सरकारी संस्थाओं (एनजीओ) द्वारा नोटबंदी के 100 दिन होने पर, इत्यादि। अब एक साल पूरे होने पर 8 नवम्बर, 2017 के दिन देश में कई जगह इसके खिलाफ प्रदर्शन होने वाले हैं।

इन सब को देख कर बस निराशा होती है कि नोटबंदी की योजना कितने बुरे तरीक़े से बनायी गयी और यह लोगों और अर्थव्यवस्था के ऊपर कितनी त्रासदी लेकर आयी।

पुस्तिका का नाम एक ऐसे कथन "Organised loot and Legalised Plunder" से लिया गया है, जिसका हाल ही में और प्रसिद्ध वर्णन, पूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह द्वारा 24 नवम्बर, 2016 को राज्य सभा में दिए भाषण में नोटबंदी के ऊपर अपनी बात रखने के दौरान किया गया था।

- माधवी बंसल और प्रिया दर्शिनी

# नोटबंदी : क्यों नक़दी पर जंग छिड़ी है (और आप इसके बीच में हैं)

हम नोटबंदी और उसके परिणाम को नहीं समझ सकते, अगर उसे नक़द के खिलाफ छिड़ी वैश्विक जंग के बीच नहीं देख पा रहे हैं

- टोनी जोसफ

वैध हुआ 1000 का नोट

## नक़दी पर वैश्विक जंग छिड़ी हुई है।

हमने पिछले कुछ महीनों में भारत में जो कुछ देखा है, वह उस जंग का हिस्सा है। नोटबंदी के कई विरोधियों के लिए यह बिंदु स्वीकार कर पाना कठिन है, क्योंकि यह उस कथन के साथ हस्तक्षेप करता है जिसमें नोटबंदी एक राजनैतिक कपट और अक्षमता के बीच मिलन की कहानी है। और अगर यह स्वीकार हो कि इसके कई और उद्देश्य थे, चाहे अच्छे या बुरे, तो इससे अक्षमता का तर्क कमजोर होता दिखता है। लेकिन तथ्य जैसे-जैसे आ रहे हैं, हमें उसे वैसे समझना होगा। अगर हम ऐसा नहीं करते हैं तो हम वास्तविक समस्याओं को देख नहीं पाएंगे और यह समझ नहीं पाएंगे कि क्या चल रहा है।

नोटबंदी का समय और इसके पीछे का तर्क भले ही राजनैतिक अवसर और आने वाले विधानसभा चुनावों के मद्देनजर किया गया हो, लेकिन कैशलेस अर्थव्यवस्था के तरफ़ क़दम पहले ही बढ़ चुके थे, और नोटबंदी ने इसको जोरदार बढ़ावा दिया है। यकीनन बहुत ही ऊँचे मानवीय लागत पर। (8 नवम्बर को कैसे अलग-अलग बातों और प्रयासों ने साथ आकर धमाका किया, इसके बारे में पढ़ने के लिए कृपया इस लिंक[1] पर जाएं।)

## यह जंग कौन कर रहा है ?

लेकिन कौन जंग कर रहा है, और क्यों ? और यहीं एक लम्बी कहानी शुरू होती है। इसको सरल रखने के लिए, पहले संक्षेप में वर्णन और फिर उसके पीछे के तथ्य।

नक़दी के ऊपर जंग चार मुख्य समूहों द्वारा की जा रही है। एक, स्थित वित्तीय सेवा प्रदाता, जैसे बैंक और क्रेडिट कार्ड कम्पनियां। दूसरा, स्टार्ट-अप्स को सम्मिलित करते हुए, तकनीकी कम्पनियां जो वित्तीय सेवा में आसार देख रही है (ऐसी कंपनियों को फिनटेक भी कहते हैं)। तीसरा, सरकारें। और चौथा, केंद्रीय बैंक। इनसे ज्यादा मज़बूत समूह की संभावना के बारे में सोच पाना कठिन है।

ऐसा नहीं है कि उनका उद्देश्य एक हैं। बल्कि, उनके अलग उद्देश्य है, जो कभी-कभी टकराते भी हैं। लेकिन उनकी मंशा एक-दूसरे की पूरक है, जब नक़दी के अस्तित्व के खिलाफ जंग की बात आती है। उदाहरण के तौर पर, पे-टीएम जैसी नई स्टार्ट-अप कम्पनियां, स्थित वित्तीय सेवा प्रदान करने वाली कंपनियों के व्यापार का कुछ हिस्सा ले सकती हैं और उनके व्यापार के कुछ तरीकों को बर्बाद कर सकती हैं, लेकिन दोनों समूहों के लिए, भौतिक नक़दी या तो एक जानलेवा शत्रु है या किसी काम का नहीं। इससे लाभ के नाम पर कुछ ज्यादा अर्जित नहीं हो पाता, बल्कि बैंकों को नक़दी गिनने, प्रबंध करने, जमा करने और एक जगह से दूसरे जगह ले जाने में काफ़ी लागत लग जाती है। लेकिन जैसे ही मुद्रा डिजिटल अक्षरों में बदल जाती है, वैसे ही दो अवसर बन पड़ते हैं – एक तो हर बार लेनदेन पर थोड़ी फीस लगा सकते हैं, और दूसरा, ग्राहक के आय व ख़र्च करने की जानकारी का स्वरूप मिल जाएगा, जो नई सेवाओं और व्यापार के तरीकों को चलाने में मदद करेगा। इसलिए बैंकों और फिनटेक कंपनियों द्वारा नक़दी को ख़त्म करने के लिए हाथ मिलाना स्वाभाविक लगता है।

भारत इस जंग में दो कारणों से एक़दम बीचोबीच है। एक, भारत में बैंक खाता और मोबाइल

[1] https://goo.gl/PK

फ़ोन की पहुँच के सन्दर्भ में आधारभूत संरचना उपलब्ध है, जो योग्य बनाता है कैशलेस अर्थव्यवस्था की ओर छलांग लगाने के लिए। दूसरा, यह एक ऐसे देश के रूप में भी पहचाना गया है, जहाँ इस जंग के होने से बहुत फ़ायदे हो सकते हैं।

लेकिन जैसा हर जंग में होता है, एक सवाल उठता है कि इस जंग के फ़ायदे कैसे बांटे जाएंगे? संक्षेप में उत्तर सिर्फ़ यह है कि नक़दी के खिलाफ जंग शुरू करने वालों के लिए लाभ त्वरित और वास्तविक है (पे-टीएम के सीइओ द्वारा जश्न मनाते हुए वीडियो को याद करें), जबकि दूसरों के लिए, इसके फ़ायदे अस्पष्ट हैं। तो कैसे हम इसके सम्पूर्ण लागत और लाभ की तुलना करें ? और इसके साथ यह भी समान रूप से जरूरी है, कि कैसे हम जाने कि इसकी मुश्किलों और फ़ायदों का वितरण कैसे किया जाएगा ?

इस जंग को समझने का सबसे अच्छा तरीका और ऊपर उठाए गए प्रश्नों के उत्तर ढूँढने के लिए हमें यह देखना होगा कि कैशलेस अर्थव्यवस्था की परिकल्पना कैसे हुई ? यह घटनाक्रम हमें यह समझने में मदद करेगा कि जंग कैसे शुरू हुई और कौन, कब और कैसे इस जंग में शामिल हुआ।

हम यह जानते हैं कि दशकों से धीरे-धीरे विश्व भर में प्लास्टिक नक़दी का स्थान ले रहा है, जिससे कई लोगों ने नक़दी के खात्मे का बहुत पहले से ही अनुमान लगाना शुरू कर दिया था। विकसित अर्थव्यवस्था में नक़द अब लेनदेन की कुल संख्या में सिर्फ़ २२ प्रतिशत से ६८ प्रतिशत रह गया है। नॉर्वे, ऑस्ट्रेलिया, और डेनमार्क डिजिटल होड़ में अग्रणी हैं, तो जापान, जर्मनी, और दक्षिण कोरिया उनमें से हैं जो अभी भी नक़द को कैशलेस से ऊपर तवज्जो देते हैं, वहीं अमेरिका इन सब के मध्य में 49 प्रतिशत के नक़द लेनदेन के आंकड़ों के साथ मौजूद है। लेकिन नक़द को पूरे तरीक़े से ख़त्म कर देने का सैद्धांतिक पैमाना और तर्क की शुरुआत 2008 के आर्थिक मंदी के बाद शुरू होती है।

## द ग्रेट रिसेशन

जैसा हम जानते हैं, 2008 में शुरू हुए 'द ग्रेट रिसेशन' ने विकसित अर्थव्यवस्था वाले देशों को निचले स्तर की वृद्धि, कम निवेश, और कम महंगाई पर लम्बे समय के लिए धकेल दिया और इन देशों के केंद्रीय बैंकों को निवेश आकर्षित करने और ख़र्च बढ़ाने के लिए ब्याज दर को शून्य तक करना पड़ा। लेकिन उनके लिए भयावह बात यह थी कि उनकी अर्थव्यवस्था को दोबारा सुधारने के लिए शून्य और शून्य के बराबर ब्याज दर भी काफ़ी नहीं था। दरअसल कुछ

देश शून्य से भी थोड़ा नीचे स्तर पर चले गए, जिनमें डेनमार्क पहला था 2012 में, और इसके पीछे यूरोप के केंद्रीय बैंक 2014 में और जापान 2016 में।

महंगाई और शिथिलता दोनों पर नियंत्रण करने के लिए केंद्रीय बैंकों के पास ब्याज दर सबसे ताकतवर हथियार है। अगर अर्थव्यवस्था तेज़ी से बढ़ती है और महंगाई तय सीमा से ऊपर चली जाती है तो केंद्रीय बैंक ब्याज दर बढ़ा देते हैं जिससे निवेश और ग्राहकों द्वारा खर्चे कम हो जाते हैं। लोग ख़र्च कम करते हैं और बचाने ज्यादा लगते हैं जिससे महंगाई के साथ-साथ देश की वृद्धि भी कम हो जाती है। लेकिन अगर अर्थव्यवस्था ज्यादा निवेश ना हो पाने और मांग ना होने की स्थिति में शिथिल हो और महंगाई काफ़ी कम हो, तो केंद्रीय बैंक ब्याज दर को कम कर देते हैं, जिससे बाज़ार में मांग बढ़ सके। आर्थिक सिद्धांत यह बतलाते हैं कि 2008 के मंदी के समय से कई विकसित अर्थव्यवस्था में ब्याज दर को शून्य से नीचे करना, उस समय की भयावह स्थिति से निकालने के लिए जरूरी हो सकता था।

निगेटिव (नारात्मक) ब्याज दर का मतलब यह है कि अगर आप बैंक में एक साल के लिए 100 रुपये जमा करते हैं, तो बजाय, 5 प्रतिशत के ब्याज दर होने पर 105 रुपये मिलने के, आपको 99.90 रुपये मिल सकते हैं – बाक़ी के 10 पैसे 0.1 प्रतिशत निगेटिव ब्याज दर के कारण बैंक को चले जाते हैं। इससे यह उम्मीद होती है कि निगेटिव ब्याज दर के कारण जब पैसे रखने के बदले लागत लगने लगेगी तो इससे बैंक, व्यापारी, और व्यक्ति अपने पैसों को क़र्ज़ देना, निवेश करना, और ख़र्च करने पर बाध्य कर देंगे, बजाय जमा रखने के।

जितना कम निगेटिव ब्याज दर होगा उतना ही ख़र्च और वृद्धि की ओर प्रोत्साहन होगा, जैसे खर्चे पर लगाम लगाने के लिए ज्यादा पॉजिटिव ब्याज दर लगाया जाता है। अब ऐसा सिद्धांतों में अच्छा है, लेकिन वास्तविकता में थोड़ी मुश्किलें भी हैं। केंद्रीय बैंक ब्याज दर ज्यादा कर सकते हैं, जितना चाहें, लेकिन इसके उलट वे इसको कम करते हुए निगेटिव नहीं ले जा सकते हैं। इसका एक साधारण-सा कारण यह है कि जैसे ही ब्याज दर निगेटिव हो जाएगा, सभी लोग बैंकों से पैसा निकाल अपनी तिजोरियों में रखना शुरू कर देंगे। कोई ख़र्च नहीं होगा और केंद्रीय बैंकों की मंशा पूरी नहीं हो पाएगी। दूसरे शब्दों में, अर्थशास्त्री इसे केंद्रीय बैंकों द्वारा ब्याज दर के उपयोग कर पाने में विषमता मानते हैं। उनके पास असीमित ताकत है किसी भी बढ़ती अर्थव्यवस्था को नियंत्रित कर पाने की, लेकिन वहीं किसी डूबती हुई अर्थव्यवस्था को वापस ठीक करने के लिए ब्याज दर कम करने की बहुत ही सीमित ताकत है।

इस स्थिति को जाहिर करने के लिए अर्थशास्त्री इसे "इफेक्टिव लोअर बाउंड या इएफ़एल" जैसे तकनीकी शब्द प्रयोग करते हैं, जिसका अर्थ यह होता है कि ऐसा निगेटिव ब्याज दर

जिसके नीचे लोग बैंकों से पैसे निकाल लेंगे। बैंकों में पैसा रखना आसान होता है, जिसके कारण इएलबी साधारणतः शून्य ना होते हुए उससे थोड़ा नीचे होता है, जैसे 0.5 प्रतिशत, या 1 प्रतिशत। लोगों को ज्यादा फर्क नहीं पड़ता, अगर निगेटिव ब्याज दर ज्यादा परेशानी की बात ना हो, क्यूंकि बैंक खाता और डेबिट कार्ड के उपयोग में काफ़ी सहजता भी होती है।

'द ग्रेट रिसेशन' के बाद केंद्रीय बैंकों ने अपने-आप को इएलबी के काफ़ी नजदीक चलते हुए पाया और इस स्थिति में कुछ अर्थशास्त्रियों को एक नया ख़याल आने लगा-नक़दी के खात्मे का, जो कइयों को काफ़ी भयानक लगा। अगर कोई नक़द नहीं होगा, तो लोग अपने पैसे बैंकों से वापस नहीं निकाल पाएंगे और केंद्रीय बैंक अपने तरीक़े से जितना चाहे निगेटिव ब्याज दर लगा पाएंगे। दूसरे शब्दों में, नक़दी के खात्मे से केंद्रीय बैंक की मंदी से लड़ने और वृद्धि को बढ़ाने की क्षमता बढ़ जाएगी। यकीनन, यह लोगों के बचत पर जबरन कब्ज़ा है और कइयों को यह बेरहम लगेगा। लेकिन अर्थशास्त्री इसपर तर्क देंगे – इसमें नया क्या है? लोग आज महंगाई के बावजूद नक़दी रखते हैं, जब उन्हें पता है कि उनके पैसों की क़ीमत घट रही है। और यह ठीक इसकी उलट स्थिति होगी – जब महंगाई बहुत कम होगी या बिलकुल ना के बराबर होगी, और इसके साथ निगेटिव ब्याज दर होगा आपकी बचत पूँजी पर, जिससे आप भाग नहीं पाएंगे।

**टोनी जोसफ**, आर्थिक विश्लेषक व बिज़नेस वर्ल्ड के पूर्व संपादक हैं।

यह लेख पहली बार 28 जनवरी, 2017 को Scroll.in (https://www.scroll.in/) में मूलतः प्रकाशित हुआ था, जिसे आप नीचे दिए लिंक पर देख सकते हैं: https://goo.gl/ibi5RJ

(प्रकाशित लेख का हिंदी अनुवाद **अमित कुमार** ने किया है).

# नोटबंदी : ग़ैर क़ानूनी धन कहां, जब 99% रद्द नोट आ गए वापस – आरबीआई

-दिनेश उन्नीकृष्णन

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी द्वारा नोटबंदी की घोषणा किए जाने के क़रीब 10 महीनों के बाद भारतीय रिज़र्व बैंक (आरबीआई) ने आख़िरकार बैंकिंग व्यवस्था के पास लौट आए 500 और 1000 रुपए के पुराने नोटों पर आरंभिक आंकड़े जारी किए हैं। साफ़ तौर पर ये आंकड़े सरकार और केंद्रीय बैंक में से किसी को भी ख़ुशी देने वाले नहीं हैं। इन आंकड़ों से जाहिर होता है कि सारी रक़म वापस लौट आई है।

रिज़र्व बैंक ने बुधवार की शाम को जारी की गई वार्षिक रिपोर्ट में कहा है कि 30 जून 2017 तक हासिल किए गए एसबीएन (विशिष्ट बैंक नोटों) का अनुमानित मूल्य 15.28 लाख करोड़ रुपए का है, हालांकि भविष्य में पुष्टि की प्रक्रिया के पूरे होने पर इन आंकड़ों में सुधार किया जा सकता है। नोटबंदी के समय 500 और 1000 रुपए के रद्द किए गए कुल नोटों का मूल्य 15.44 लाख करोड़ रुपए था, जो उस समय प्रचलित मुद्रा के मूल्य का 86 फ़ीसदी था। इसका मतलब है कि नोटबंदी में रद्द की गई मुद्रा का 99 फ़ीसदी बैंकिंग व्यवस्था में वापस आ गया है। कुल 15.44 लाख करोड़ रुपए में से सिर्फ़ 16,००० करोड़ रुपयों से थोड़ी ज्यादा की रक़म वापस नहीं आई है।

और भूलिए मत, ये अंतिम आंकड़े नहीं हैं। रिज़र्व बैंक ने उन पुराने नोटों को अभी नहीं गिना है, जो सहकारी बैंकों में जमा किए गए थे या नेपाल में संस्थानों में नागरिकों द्वारा जमा किए गए थे। जब ये आंकड़े जोड़े जाएंगे, तब तक इसकी संभावना है कि अंतिम आंकड़े 100 फ़ीसदी की निशानी तक पहुंच जाएंगे। रिज़र्व बैंक की रिपोर्ट में नोटबंदी को लेकर कुछ दूसरे दिलचस्प ब्योरे भी हैं। रिपोर्ट बताती है कि नोटबंदी के बाद मुद्रा नोटों को छापने पर आने वाली लागत (मुख्य रूप से 2000 और 500 रूपए के नए नोटों के चलते) बढ़ कर 7,965 करोड़ रुपए पर पहुंच गई जो पिछले साल के 3,421 करोड़ रुपए के दोगुने से भी ज्यादा है।

इस पूरी प्रक्रिया के दौरान नक़ली या जाली नोटों की संख्या बहुत थोड़ी सी थी, ऐसे क़रीब 7.6 लाख नोट मिले, जो पिछले साल के ६.३ लाख नोटों की तुलना में थोड़ा ही ज्यादा है।

अब आख़िरकार जब आंकड़े जारी कर दिए गए हैं, यह नतीजा निकाला जा सकता है कि रिज़र्व बैंक ने मोदी सरकार को जिस नोटबंदी की 'सिफ़ारिश' की थी, उससे लागत-ख़र्च के विश्लेषण

नोट बदलने बैंक के बाहर पहुंची भीड़ – स्रोत: मोनितो (www.monito.com)

के आधार पर बैंक को घाटा ही हुआ है। ग़ैरक़ानूनी धन की कोई भी बड़ी रक़म बैंकिंग व्यवस्था से बाहर बर्बाद नहीं हुई है, जैसा कि सरकार ने शुरू में उम्मीद की थी। इसके उलट, इस व्यापक कवायद की क़ीमत के आधार पर देखें तो रिज़र्व बैंक और सरकार दोनों को ही नुक़सान हुआ है – यही मुख्य वजह है कि इस बार रिज़र्व बैंक से सरकार को मिलने वाला लाभांश आधा घट गया है।

जून 2017 को ख़त्म होने वाले साल में रिज़र्व बैंक ने लाभांश के रूप में सरकार को 30,659 करोड़ रुपए सौंपे, जो पिछले साल के स्तर से आधे से भी कम है। पिछले साल इसने 65,876 करोड़ रुपए हस्तांतरित किए थे। इस साल अपेक्षा थी कि नोटबंदी से होने वाले लाभ की वजह से 74,901 करोड़ रुपए सरकार के ख़जाने में आएंगे।

## क्या नोटबंदी नाकाम रही?

इसका जवाब इस पर निर्भर करता है कि आप यह सवाल किससे पूछ रहे हैं।

8 नवंबर को मूल रूप से नोटबंदी के तीन लक्ष्य बताए गए थे – व्यवस्था में काले धन पर, नक़दी आधारित रिश्वत और आतंकी निवेश बड़ी चोट। इसको समझने के लिए भरपूर सबूत मौजूद हैं

कि नोटबंदी ने भ्रष्टाचार और आतंक पर असर नहीं डाला है। (भ्रष्टाचार पर नोटबंदी के असर पर एक रिपोर्ट यहां पढ़ें[2])

500 और 1000 रुपए के सभी नोटों के बैंक काउंटरों पर वापस पहुंचने के साथ ही यह सिद्धांत चारों खाने चित्त हो गया कि औपचारिक व्यवस्था के बाहर ग़ैरक़ानूनी धन नक़दी में जमा किया गया है। इसके बाद हमारे पास दो स्थितियां बचती हैं।

पहली स्थिति यह कि शीर्ष अर्थशास्त्रियों ने जो कहा था उसके उलट भारत में अवैध धन की कोई भी बड़ी रक़म नक़दी में जमा करके नहीं रखी गई थी।

27 दिसंबर को मिंट अख़बार के लिए संयुक्त रूप से लिए गए एक लेख में (यहां पढ़ें[3]) जाने-माने अर्थशास्त्री और कोलंबिया विश्वविद्यालय के प्रोफ़ेसर जगदीश भगवती, आईडीएफसी इंस्टीट्यूट के रेजीडेंट सीनियर फ़ेलो विवेक दहेजिया, जॉन्स हॉपकिंस यूनिवर्सिटी में अंतरराष्ट्रीय अर्थशास्त्र के विशिष्ट प्रोफ़ेसर चुंग जू युंग तथा कोलंबिया विश्वविद्यालय में राज सेंटर ऑन इंडियन इकोनॉमिक्स पॉलिसीज के उप निदेशक प्रवीण कृष्ण ने मोदी सरकार की नोटबंदी के क़दम का बचाव करते हुए इस अनुमान को स्वीकार किया।

"साफ़ तौर पर ग़ैरक़ानूनी धन के मुद्दे से निबटने में इसकी कारगरता के लिहाज से, सफलता को इस पैमाने पर मापा जा सकता है कि इसने कुल कितना कर राजस्व पैदा किया और कितनी ग़ैरक़ानूनी रक़म को बर्बाद किया. मान लीजिए कि हम इस अनुमान को कबूल करें कि रद्द किए गए क़रीब 15 लाख करोड़ नोटों का एक तिहाई ग़ैरक़ानूनी धन है," भगवती और उनके सह-लेखकों ने इस लेख में लिखा।

इस अनुमान के आधार पर, उन्होंने इसका अंदाजा भी लगाया था कि अगर नोटबंदी की कवायद कामयाब हो गई होती तो मोदी सरकार की उपलब्धियां क्या रही होतीं – क़रीब 2.5 लाख करोड़ रुपए। इस आंकड़े तक वे इस तरह पहुंचे।

"मोटे तौर पर कहें तो अगर उस रक़म पर आयकर लगाया जाता तो इससे उस रक़म का 30 फ़ीसदी राजस्व पैदा होता (यानी 5 लाख करोड़ गुणा 0.3 = 1.5 लाख करोड़ रुपए)। अगर सारी ग़ैरक़ानूनी रक़म वापस आ जाए और उसकी पहचान ग़ैरक़ानूनी रक़म के रूप में हो जाए तो ग़ैरक़ानूनी धन का संपूर्ण रूप से पता लगाए जाने से 50 फ़ीसदी कर राजस्व पैदा होना चाहिए (यानी 5 लाख करोड़ गुणा 0.5 = 2.5 लाख करोड़ रुपए)।"

---

[2] https://goo.gl/qqqmKV

[3] https://goo.gl/riKGmo

अगर रिज़र्व बैंक के आंकड़ों के आधार पर देखें तो ग़ैर क़ानूनी धन पर भगवती और उनकी टीम के दोनों ही अंदाजे और सरकार को उससे होने वाले फ़ायदे के अनुमान हकीक़त से परे लगते हैं। सबसे पहले तो, सरकार ने कभी भी यह अंदाजा नहीं लगाया था कि नक़दी के रूप में कितना ग़ैर क़ानूनी धन व्यवस्था के भीतर मौजूद है। इसलिए शायद, यह एक ख़राब सलाह थी. योजना को दोषपूर्ण तरीक़े से लागू किए जाने से हालात और ख़राब ही हुए।

## नोटबंदी का दर्द

नोटबंदी से पैदा हुए नक़दी के संकट की बहुत बुरी मार आम आदमी पर पड़ी, कारोबारों को इसका नुक़सान उठाना पड़ा और आर्थिक वृद्धि पर इसका खासा बुरा प्रभाव पड़ा।

एक साल पहले की तिमाही की 8 फ़ीसदी की तुलना में इस साल चौथी तिमाही में जीडीपी गिरकर 6.1 फ़ीसदी पर पहुंच गया। सकल मूल्य संवर्धित (ग्रॉस वैल्यू ऐडेड, जीवीए) में गिरावट तो और भी तीखी थी जो पिछले साल की चौथी तिमाही के 8.7 फ़ीसदी से गिर कर इस साल 5.6 फ़ीसदी पर आ गया। असंगठित क्षेत्र में रोज़गार पर ख़ास तौर से मार पड़ी। यहां तक कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आरएसएस) से जुड़े भारतीय मजदूर संघ (बीएमएस) ने भी इसके लिए मोदी सरकार को दोषी ठहराया[4]।

“नई सरकार के तहत, अब तक 1 लाख 35 हज़ार रोज़गार के मौक़े पैदा हुए हैं, लेकिन 20 लाख लोगों ने अपना रोज़गार खो दिया है,” बीएमएस के अध्यक्ष बैज नाथ राय ने कलकत्ता से प्रकाशित अख़बार द टेलीग्राफ को बताया। राय को यह कहते हुए उद्धृत किया गया कि “हमारे पास नोटबंदी की वजह से असंगठित क्षेत्र में रोज़गार के नुक़सान की रिपोर्टें हैं, लेकिन इसका नुक़सान कितना गहरा है, इसका फैसला होना बाक़ी है”।

अब, दूसरी स्थिति यह है कि ग़ैर क़ानूनी पैसे वालों ने अपनी बेईमानी से जुटाए गए धन को बैंकों में सीधे या बेनामियों के जरिए या दूसरे उपायों (ख़रीद/रिफंड/राजनीतिक चंदे वग़ैरह) से सफ़ेद बनाने के लिए नोटबंदी को एक बड़े मौक़े के रूप में लिया। अब वे कर-अधिकारियों द्वारा पकड़े जाने के और संभावित दंडात्मक कार्रवाइयों के ख़तरे का सामना कर रहे हैं। लेकिन कर चोरी करने वालों ने सोचा होगा कि लूटे गए नोटों को जला देने या नाली में बहा देने से बेहतर तो उन पर जुर्माना अदा करना ही बेहतर होगा। इसके अलावा, इस उम्मीद ने भी बेईमानों को हौसला दिया होगा कि काम के बोझ से दबे हुए कर-विभाग को कसूरवारों पर हाथ

[4] https://goo.gl/n1n9yn

डालने में काफ़ी समय लगेगा।

यह तर्क भी दिया गया कि नोटबंदी के कुछ अच्छे पहलू भी हैं। मोदी सरकार ने ग़ैरक़ानूनी धन से लड़ने के अपने इरादे को जाहिर कर दिया है। इसके अलावा सरकार और नोटबंदी के समर्थकों ने सरकार के इस व्यापक अफरा-तफरी मचाने वाले क़दम की हिमायत करते हुए कर आधार की व्यापकता, लोगों द्वारा अधिक संख्या में इसका पालन किए जाने, डिजिटल अर्थव्यवस्था की तरफ़ आगे बढ़ने का हवाला दिया है और दावा किया कि नोटबंदी के बाद बैंक खातों में आई रक़म का खासा हिस्सा ग़ैर क़ानूनी धन है। लेकिन अब तक जमा की गई ऐसी रकमों में से ग़ैर क़ानूनी धन का कोई ख़ास रक़म नहीं पाई गई है।

स्वतंत्रता दिवस पर अपने भाषण में मोदी ने कहा कि नोटबंदी के बाद 2-3 लाख करोड़ रुपए के ग़ैरक़ानूनी धन को बैंकिंग व्यवस्था में वापस लाया गया। लेकिन अगस्त में वित्त राज्य मंत्री संतोष कुमार गंगवार ने संसद को बताया कि वित्त वर्ष 2016-17 में आयकर विभाग ने 13,715 करोड़ रुपए की अघोषित आय का पता लगाया है। मंत्री ने संसद में एक लिखित जवाब में कहा कि 5,102 जगहों पर आयकर छापों से 15,496 करोड़ रुपए की अघोषित आय का पता लगा है। ये आंकड़े न सिर्फ़ उलझन में डालने में वाले हैं, बल्कि काफ़ी कुछ विरोधाभासी भी हैं।

सरकार और कर-विभाग को रात-दिन काम करना होगा और इन खातों से ग़ैर क़ानूनी धन का पता लगाना होगा ताकि नोटबंदी के विचार को सही ठहराया जा सके. अगर बैंक खातों से ग़ैर क़ानूनी धन का पता लगाने की कवायद नाकाम रह गई तो इतिहास नोटबंदी को इस तरह याद करेगा, कि इसने बेईमान लोगों को राज्य द्वारा प्रायोजित एक सुनहरा मौका दिया कि वे अपने ग़ैरक़ानूनी धन को क़ानूनी बना सकें और हल्का-फुल्का जुर्माना देकर बच निकलें।

इस लेख के लिए आंकड़े **किशोर क़दम** ने जुटाए हैं।

**दिनेश उन्नीकृष्णन**, रामनाथ गोयनका खिताब से सम्मानित पत्रकार व लेखक हैं। वह मुंबई में रहते हैं और आर्थिक मुद्दों पर लिखने का गहरा अनुभव हैं।

यह लेख पहली बार 31 अगस्त, 2017 को Firstpost.com (http://www.firstpost.com/) पर प्रकाशित हुआ था, जिसे आप नीचे दिए लिंक पर देख सकते हैं: https://goo.gl/sJDRoy

(प्रकाशित लेख का हिंदी अनुवाद **रियाजुल हक़** ने किया है।)

# नोटबन्दी पोस्ट ट्रूथ

-प्रसेनजित बोस

अगर हम नोटबन्दी के घोषित उददेश्यों को लेकर वित्त मंत्रालय के दावों की बारीकी से पड़ताल करे तो दिखता है कि वह अधिकतर झूठे हैं और भ्रामक हैं। अगर हम शेष अर्थव्यवस्था और जनता पर उसके प्रभाव को छोड़ भी दें तो आधिकारिक आंकड़े भी इस बात को उजागर करते हैं कि नोटबन्दी की राजकोषीय क़ीमत उसके लाभ से अधिक है।

जिस दिन रिज़र्व बैंक आफ इंडिया ने जब समाचार दिया कि 500 और 1,000 रूपए के प्रतिबंधित नोटों का 99 फ़ीसदी बैंकिंग प्रणाली में 30 जून 2017 तक लौट आया है, उसी दिन वित्त मंत्रालय ने एक औपचारिक वक्तव्य जारी किया[5] जिसके तहत यह स्पष्ट किया गया था कि नोटबन्दी किस तरह ''भारतीय अर्थव्यवस्था और उसके लोगों के लिए प्रचंड रूप से लाभदायक रही है।''

नोटबन्दी के उददेश्यों को रेखांकित करते हुए यह वक्तव्य शुरू होता है: ''1. काले धन को बाहर निकालना, 2. नक़ली भारतीय मुद्रा को समाप्त करना , 3. आतंकवाद और वामपंथी उग्रवाद के वित्तीय जड़ों पर प्रहार करना , 4. कर आधार और रोज़गार का विस्तार करने के लिए अनौपचारिक अर्थव्यवस्था को औपचारिक अर्थव्यवस्था में तब्दील करना और 5. भारत को कैशलेस अर्थव्यवस्था में बदलने के लिए भुगतान के डिजिटलीकरण को गति प्रदान करना।'' 8 नवम्बर 2016 को प्रधानमंत्री द्वारा दिए गए व्याख्यान को इस सन्दर्भ में याद कर सकते हैं।

> '' भ्रष्टाचार, काले धन, नक़ली नोट और आतंकवाद के खिलाफ इस संघर्ष में, हमारे मुल्क का शुद्धिकरण करने के इस आन्दोलन में, क्या हमारी जनता कुछ दिनों के लिए तकलीफ नहीं झेलेगी ? मुझे पूरा भरोसा है कि हर नागरिक खड़ा होगा और इस ''महायज्ञ'' में सहभागी बनेगा।

यहां पर या प्रधानमंत्री के व्याख्यान में कहीं भी ''अनौपचारिक'' या ''औपचारिक अर्थव्यवस्था'', ''कर आधार का विस्तार करना'', ''डिजिटलीकरण'' और ''लेस कैश अर्थव्यवस्था (अर्थात कम मुद्रा की अर्थव्यवस्था)" आदि का कहीं उल्लेख नहीं मिलता।

[5] https://goo.gl/U8wCak

वित्त मंत्री के वक्तव्य में उल्लेखित तीसरा और चौथा बिन्दु/नुक्ता, साफ़ तौर पर बाद में सोचा गया है, जिन्हें घोषित लक्ष्यों से ध्यान हटाते हुए एक तरह से झेंप मिटाने के अन्दाज में प्रस्तुत किया गया है। इसके अलावा, अगर हम उपरोल्लेखित इन उददेश्यों की पूर्ति को लेकर मंत्रालय के दावों की बारीकी से पड़ताल करें तो पता चलेगा कि अधिकतर यह दावे झूठे और भ्रामक हैं।

## बैंकिंग प्रणाली में नगदी की वापसी

वक्तव्य कहता है:

> सरकार की अपेक्षा थी कि सभी विशिष्ट बैंक नोट बैंकिंग प्रणाली में लौट आएंगे ताकि वह प्रभावी ढंग से इस्तेमाल हो सकनेवाली मुद्रा में रूपांतरित हो सकें।

आठ नवम्बर 2016 के बाद का वास्तविक घटनाक्रम इस बात को प्रमाणित नहीं करता। स्टेट बैंक आफ इंडिया के प्रमुख आर्थिक सलाहकार ने 14 नवम्बर को लिखे एक लेख में तर्क दिया था कि चूंकि 1978 के नोटबन्दी के प्रसंग में निषिद्ध मुद्रा का 25 फ़ीसदी बैंकिंग प्रणाली में लौट नहीं सका था, यह मानना वाजिब होगा कि वर्तमान में भी निषिद्ध मुद्रा का 25 से 50 फ़ीसदी नहीं लौटेगा। उन्होंने लिखा था, '' लगभग 2,482 से 4,800 बिलियन रूपए होंगे जो बदले नहीं जाएंगे और बैंकिंग प्रणाली के बाहर रहेंगे। उस हद तक देखें तो व्यवस्था में उपलब्ध नगदी कम होगी।'' (Ghosh 2016)

सर्वोच्च न्यायालय में नोटबन्दी के निर्णय की हिमायत करते हुए एटर्नी जनरल ने 15 नवम्बर 2016 को कहा था कि सरकार का अनुमान है कि काले पैसे/ब्लैक मनी का आकार 15 से 16 लाख करोड़ रूपए है और उसकी अपेक्षा है कि लोग 10 से 11 लाख रूपए बैंकों में जमा करेंगे। उन्होंने आगे जोड़ा, ''बाक़ी 4-5 लाख करोड़ रूपए उत्तर पूर्व और कश्मीर में असन्तोष पैदा करने के लिए इस्तेमाल किया जा रहा है। उसे बेअसर कर दिया जाएगा।'' (Times of India 2016)

स्टेट बैंक आफ इंडिया के मुख्य आर्थिक सलाहकार ने 23 नवम्बर 2016 को फिर एक बार लिखा कि इस तथ्य पर कोई सन्देह नहीं है कि लगभग 2.4 से 4.8 लाख करोड़ रूपए प्रणाली में नहीं लौटेंगे और इस तरह रिज़र्व बैंक आफ इंडिया की देनदारियां उसी अनुपात में ''समाप्त होंगी'', और मतभेद महज इस बात पर हैं कि इसके परिणामस्वरूप रिज़र्व बैंक आफ इंडिया को जो पूँजी लाभ होगा उसको कैसे संभालना होगा। उन्होंने जोड़ा: '' हम इस बात को दोहराना

चाहते हैं कि सबसे बेहतर तरीका पहलेवाला होगा और सरकार को चाहिए कि वह इस फंड को अवरचना विकास जैसी गतिविधियों पर या उन गतिविधियों पर ख़र्च करें जिन्हें वह उचित समझती है। इसमें कोई गलत नहीं होगा, जैसा कि कुछ दायरों में कहा जा रहा है।'' (Ghosh 2016a)

इसके बाद, रिज़र्व बैंक आफ इंडिया के कई पूर्व गवर्नरों और डेप्युटी गवर्नरों ने सार्वजनिक तौर पर प्रतिक्रिया देते हुए रिज़र्व बैंक की ''समाप्त देनदारियों'' तथा उसके छप्परफाड़ मुनाफे के तर्क को प्रश्नांकित किया था। सात दिसम्बर को ही रिज़र्व बैंक आफ इंडिया ने आधिकारिक तौर पर प्रेस सम्मेलन में बताया था कि 11.55 लाख करोड़ रूपए बैंकिंग प्रणाली में लौट आए हैं, तथा रिज़र्व बैंक आफ इंडिया के गवर्नर की तरफ़ से इस सम्भावना को भी खारिज किया गया था कि बैंक की देनदारियां ''समाप्त'' होंगी या सरकार को कुछ विशेष लाभांश/डिवीडंड प्राप्त होगा। इसके बावजूद स्टेट बैंक आफ इंडिया की अनुसंधान शाखा ने मुद्रा नोटों के बारे में रिज़र्व बैंक आफ इंडिया के आंकड़ों की प्रामाणिकता पर सवाल उठाया था जो दोहरी गिनती के चलते बैंकिंग में लौट आए थे। (Times of India 2016)

यह बिल्कुल स्पष्ट है कि नोटबन्दी का सरकार का निर्णय छप्परफाड़ मुनाफे की अपेक्षाओं से संचालित था, जिस रूप में स्टेट बैंक आफ इंडिया के मुख्य आर्थिक सलाहकार ने रखा था। इसी वजह से प्रधानमंत्री ने गोवा में 13 नवम्बर को दिए अपने भाषण में काले पैसे के खिलाफ अपने युद्ध के लिए पचास दिन देने का लोगों को आवाहन किया था, उन्होंने यह भी जोड़ा था कि इसके बाद वह सज़ा भुगतने के लिए भी तैयार हैं। बाद में घटनाक्रम में - जब मुद्रा विनिमय और बैंक डिपाजिट आधिकारिक अपेक्षाओं को लांघ गए - तब सरकार ने अपना आख्यान बदला और अचानक डिजिटल भुगतान और अनौपचारिक अर्थव्यवस्था को औपचारिक बनाने की बात शुरू कर दी।

यह बात, इसके बाद भी दिसम्बर 2016 के अन्त तक मुद्रा के नए नोटों की कमी से प्रमाणित होती है, जिसका अर्थ यही निकलता है कि सरकार ने शुरूआत में यह अपेक्षा की थी कि नयी मुद्रा की मांग काफ़ी कम होगी और इसलिए नए नोटों को पर्याप्त संख्या में शुरूआत में नहीं छापा गया। और अब अगर वित्त मंत्रालय अपने आधिकारिक वक्तव्य में यह दावा कर रहा है कि सरकार ने शुरूआत में ही यह अपेक्षा की थी कि 99 फ़ीसदी नगदी प्रणाली में लौटेगी तो यह बात असत्य और शर्मनाक है क्योंकि नगद इस्तेमाल करनेवाली जनता को नोटबन्दी के बाद के चरण में काफ़ी दिक्कतों का सामना करना पड़ा और सौ से अधिक लोग बैंक के सामने खड़ी कतार में मर गए।

## ''काले धन को बाहर निकालना''

वित्त मंत्रालय का वक्तव्य, हालांकि इस बात को स्वीकारता है कि नोटबंदी के बाद बैंक खातों में जमा नगदी का अच्छा खासा हिस्सा ब्लैक मनी हो सकता है, वह यह भी दावा करता है कि आयकर विभाग द्वारा उसके सामने प्रस्तुत आंकड़ों की छानबीन के बाद अप्रत्याशित राजकोषीय आय होगी, जो नोटबन्दी के चलते ही संकलित हो सके हैं। मगर यह उल्लेख कि आयकर विभाग की उन 18 लाख खातों पर नज़र है जिनमें 2.89 लाख करोड़ रूपया पड़ा हुआ है, उसकी शायद ही कोई राजकोषीय प्रासंगिकता हो, क्योंकि न कोई जानता है कि इस जांच का राजस्व नतीजा क्या होगा, न इसको पूरा करने के लिए कोई समय सीमा तय की गयी है।

वित्त मंत्रालय के वक्तव्य में हाल ही में जारी आर्थिक सर्वेक्षण 2016-17 खंड 2 में शामिल उन आंकड़ों को पेश किया गया है जो बताते हैं कि नोटबन्दी के बाद आयकर निर्धारिती की संख्या में कितनी बढ़ोत्तरी हुई। हालांकि वह इस बात का उल्लेख नहीं करता कि जबकि 2016-17 में आयकर निर्धारितियों की संख्या 2015-16 की तुलना में 5.4 लाख बढ़ी है, वहीं अतिरिक्त करदाताओं के चलते जिस औसत करयोग्य आय के बारे में बताया गया है वह 2.7 लाख रूपए सालाना है, जो ढाई लाख रूपए की आयकर सीमा से थोड़ा ही अधिक है। आर्थिक सर्वेक्षण के मुताबिक इस आयकर आधार के विस्तार से संभावित राजस्व बढ़ोत्तरी 10,587 करोड़ रूपए है।

वित्त मंत्रालय के बयान में जिन आंकड़ों को पेश किया गया है वह दिखाते हैं कि नवम्बर 2016 और मई 2017 के बीच, उजागर अघोषित आय की कुल रक़म लगभग 17,526 करोड़ रूपए है, जिसमें से महज 1,003 करोड़ रूपए जब्त किए जा सके हैं। बेनामी व्यवहार पर कार्रवाई के चलते अब तक 600 करोड़ रूपए हासिल हो सके हैं। राजस्व विभाग के आंकड़े बताते हैं कि वर्ष 2013-14 के बाद, आयकर विभाग ने सालाना लगभग 10 हज़ार से 11 हज़ार करोड़ अघोषित आय को बेपर्द किया है, जिसमें 700 से 800 करोड़ रूपए जब्त किए गए हैं। वित्त मंत्रालय के वक्तव्य को देखने से स्पष्ट होता है कि अवैध सम्पत्ति को जब्त करने के मामले में नोटबन्दी के बाद कोई ख़ास फरक नहीं पड़ा है।

इस वक्तव्य में नोटबन्दी के बाद घोषित की गयी 2016-17 की दूसरी आय प्रकटीकरण योजना (प्रधानमंत्री गरीब कल्याण योजना) का उल्लेख करने से बचा गया है जो बिल्कुल निष्प्रभावी साबित हुई थी।  इसके अन्तर्गत अघोषित आय का प्रगटीकरण मुश्किल से पांच हज़ार करोड़ तक पहुंचा था, जिसमें से आधा सरकार के राजस्व खाते में जमा बताया गया। (Indian Express 2017) वित्त मंत्रालय के वक्तव्य में राजस्व लाभ के प्रस्तुत आंकड़ों के साथ

अगर इन आंकड़ों को मिला ले तो पता चलता है कि नोटबन्दी के बाद सरकार को ठोस राजस्व लाभ 4 हज़ार करोड़ रूपए से आगे नहीं बढ़ा है।

विगत बजट में वर्ष 2017-18 में आयकर संग्रहण के अनुमानित आंकड़े बताते हैं कि 2016-17 के कर संग्रहण में 22.7 फ़ीसदी बढ़ोत्तरी की तुलना में उनमें 25 फ़ीसदी बढ़ोत्तरी हुई है। अगर यह अनुमान सही निकला, तो 2016-17 में 2.3% रहे, आयकर और सकल घरेलु उत्पाद (जीडीपी) का अनुपात, 2017-18 में बढ़कर 2.6% हो जाएगा। इसके अलावा वित्त मंत्रालय का वक्तव्य बढ़े हुए आयकर रिटर्न और एडवान्स में कर संग्रहण के आंकड़े प्रस्तुत करता है मगर यह बात स्पष्ट नहीं कर पाता कि क्या यह अनुमान/प्रोजेक्शन आयकर संग्रहणों को मौजूदा वित्तीय वर्ष के बजट आकलन से परे ले जा सकेंगे, जिसका मतलब है कि विगत वर्ष की तुलना में आयकर संग्रहण में सकल घरेलू उत्पाद में महज 0.3 फ़ीसदी की बढ़ोत्तरी संभव होगी।

क्या इसे किसी भी सूरत में कर सम्रद्धि (tax bonanza) कहा जा सकता है ? और जहां तक भारतीय अर्थव्यवस्था में काले धन के भंडारण का सवाल है तो क्या यह उसकी तुलना में बहुत मामूली नहीं है क्योंकि अलग अलग अनुमानों के हिसाब से काले धन का अनुमान भारत के सकल घरेलू उत्पाद के 20 से 50 फ़ीसदी के बीच है ? अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि लोगों ने जो पीड़ा झेली क्या वह आयकर संग्रहण के माध्यम से सकल घरेलू उत्पाद में महज 3 फ़ीसदी बढ़ोत्तरी के लिए थी ?

अगर हम चीज़ों को ठीक से परिप्रेक्ष्य में रखें तो वर्ष 2017-18 में केन्द्र सरकार के कुल खर्चे के बारे में अनुमान है कि वह सकल घरेलू उत्पाद का 12.7 फ़ीसदी होगा और राजकोषीय घाटा सकल घरेलू उत्पाद का 3.2 फ़ीसदी होगा। भारत के सूचीबद्ध 38 बैंकों के सकल नान परफार्मिंग एसेटस की मात्रा मार्च 2017 तक सकल घरेलू उत्पाद का 4.6 फ़ीसदी लांघ चुकी है और सार्वजनिक क्षेत्रा के बैंकों ने 2016-17 के सकल घरेलू उत्पाद का लगभग 0.5 फ़ीसदी नान परफार्मिंग एसेटस माफ किया है। नोटबन्दी के बाद वर्ष 2017-18 के आयकर अनुमान/प्रोजेक्शन अगर अचूक साबित भी हो जाएं, इसका अर्थ एक समुद्र से चन्द बूंदों को निकालने से अधिक कुछ नहीं होगा, काले धन को बाहर निकालने की बात ही छोड़ दें।

## नक़ली मुद्रा और आतंक को वित्तीय सहायता

वित्त मंत्रालय का वक्तव्य दावा करता है:

> विनिर्दिष्ट (स्पेसिफाइड) बैंक नोटों की नोटबन्दी के चलते आतंकवादी और

नक्सलवादी वित्तीय सहायता पूरी तरह बन्द हो गयी। कोई भी उच्च गुणवत्ता वाली नक़ली मुद्रा गुप्तचर कार्रवाइयों के दौरान नहीं मिली। यहां तक कि भारत बांगलादेश सीमा पर भी यही हाल था। इसके अलावा, उसने हवाला आपरेटर्स और डब्बा टेडिंग ठिकानों पर भी प्रतिकूल प्रभाव डाला।

कोष्टक 1: भारत में आतंक सम्बन्धी गतिविधियों में मौतें

| | भारत | | | | जम्मू और कश्मीर | | | | उत्तर पूर्व | | | | वामपंथी उग्रवाद | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | C | SP | T | Total | C | SP | T | Total | C | SP | T | Total | C | SP | T | Total |
| 2015 | 181 | 155 | 386 | 722 | 20 | 41 | 113 | 174 | 62 | 49 | 162 | 273 | 93 | 57 | 101 | 251 |
| 2016 | 199 | 179 | 515 | 893 | 14 | 88 | 165 | 267 | 61 | 17 | 82 | 160 | 123 | 66 | 244 | 433 |
| 2017* | 139 | 132 | 270 | 541 | 43 | 54 | 142 | 239 | 27 | 10 | 39 | 76 | 69 | 68 | 88 | 225 |

टिप्पणी: *आंकडे अगस्त 27, 2017 तक के हैं।
C- नागरिक, SP- सुरक्षा कर्मी, T- आतंकवादी
स्त्रोत: South Asia Terrorism Portal

हालांकि ऐसे तमाम दावे तथ्यों के प्रतिकूल जान पड़ते हैं। अगर हम कोष्टक 1 में दिए South Asia Terrorism portal के आंकड़ों को देखें तो पता चलता है कि आतंकवाद से जुड़ी घटनाओं में मौतों में 2017 में (अगस्त 2017 तक के आंकड़े) विगत दो साल की तुलना में शायद ही कोई रेखांकित करनेवाली कमी दिखाई दी, जबकि जम्मू और कश्मीर की हिंसा में वास्तव में बढ़ोत्तरी ही दिखाई दी। हालांकि आतंकवाद से जुड़ी हिंसा की बढ़ोत्तरी और उसमें कमी के पीछे काफ़ी जटिल कारण निहित होते हैं, नोटबन्दी के बाद भारत के प्रमुख संघर्ष क्षेत्रों में ऐसी हिंसा में कमी के शायद ही कुछ चिन्ह दिखाई देते हों। यह भी कहा जा सकता है कि आतंक की वित्तीय सहायता पर नोटबन्दी का कुछ भी असर नहीं पड़ा, जब तक वित्त मंत्रालय यह न कहे (निश्चित ही सबूतों के बिना) कि ऐसे आतंक के अंजामकर्ता अब अपनी गतिविधियों को मुफत में अंजाम दे रहे हैं।

अब जहां तक नक़ली मुद्रा का सवाल है, सबूत और विवादास्पद हैं। सरकार ने इंडियन स्टैटिस्टिकल इन्स्टिटयूट (ग्रह मंत्रालय द्वारा प्रायोजित) द्वारा किए गए अध्ययन के आधार पर सर्वोच्च न्यायालय में जो शपथपत्रा दाखिल किया, उसमें अनुमान लगाया गया था कि भारतीय अर्थव्यवस्था में चार सौ करोड़ रूपए की नक़ली मुद्रा प्रचलन में है। रिज़र्व बैंक आफ इंडिया की सालाना रिपोर्ट बताती है कि मार्च 2017 तक 500 रूपए तथा 1,000 रूपए की जो नक़ली मुद्रा बरामद हुई वह महज 41.5 करोड़ रूपए थी, जो वर्ष 2014-15 को लेकर इंडियन

स्टैटिस्टिकल इन्स्टिटयूट- ग्रह मंत्रालय के अनुमानों के महज दस फ़ीसदी थी। इसका अर्थ यही है कि 15.28 लाख करोड़ रूपयों का महज 0.003 फ़ीसदी ऐसे नोट, जो बैंकिंग प्रणाली में नोटबन्दी के बाद पहुंचे, नक़ली थे।

इसलिए नोटबन्दी निर्णय लेने के लिए प्रभावित करनेवाले नक़ली मुद्रा के अनुमान गलत थे और अनावश्यक रूप से डर पैदा करनेवाले थे। 41.5 करोड़ रूपए की नक़ली मुद्रा की समाप्ति के लिए अर्थव्यवस्था के प्रचलन की 84 फ़ीसदी मुद्रा को अचानक बेकार कर देने का कोई औचित्य नहीं था। इसके अलावा, रिज़र्व बैंक आफ इंडिया की सालाना रिपोर्ट बताती है कि नए जारी 2,000 रूपए तथा 500 रूपए की मुद्रा के नक़ली 13.75 लाख रूपए मार्च 2017 तक बरामद हुए थे। इस तरह भारतीय मुद्रा के नक़ली संस्करण बनाने की अवरचना (इन्फरास्टक्चर) नोटबन्दी के बाद भी अक्षुण्ण रही दिखती है।

## अर्थव्यवस्था पर प्रभाव

वित्तमंत्री का वक्तव्य बेखटके कहता है:

> कुछ लोगों ने अपेक्षा व्यक्त की थी कि नोटबन्दी के चलते आर्थिक बढ़ोत्तरी को जबरदस्त झटका लगेगा। उनकी उम्मीदों पर पानी फिरा है। भारत आज भी दुनिया में सबसे मज़बूत बढ़ोत्तरी के रास्ते पर आगे बढ़ रहा है।

यह एक और मिसाल है कि किस तरह वित्त मंत्रालय आज भी सच्चाई से इन्कार कर रहा है। अर्थव्यवस्था की बढ़ोत्तरी की तिमाही दर (संकलित सकल मूल्य या ग्रॉस वैल्यू एडेड या GVA) मूल कीमतों पर 2016-17 की दूसरी तिमाही (जुलाई-सितम्बर) के 6.8 फ़ीसदी से तीसरी तिमाही (अक्तूबर-दिसम्बर) में 6.7 फ़ीसदी तक पहुंचा और चौथी तिमाही (जनवरी-मार्च) में 5.6 फ़ीसदी तक लुढका। 2017-18 (अप्रैल-जून) की पहली तिमाही के हालही में प्रकाशित आंकड़ें संकलित सकल मूल्य (GVA) की बढ़ोत्तरी दर 5.6 फ़ीसदी तक दिखाता है जो 2016-17 की पहली तिमाही के 7.6 फ़ीसदी से वहां तक लुढकी है। (देखें, Figure 1)

नोटबन्दी के बाद दौर में न केवल समूची अर्थव्यवस्था काफ़ी सुस्त हुई है, मैन्युफैक्चरिंग, क्रषि, माइनिंग और निर्माण के क्षेत्रों में भी बढ़ोत्तरी तेज़ी से कम हुई है। अगर ''सार्वजनिक प्रशासन, सुरक्षा और अन्य सेवाओं'' तथा ''व्यापार, होटल, यातायात और कम्युनिकेशन'' जैसे सेवा क्षेत्रों में विगत दो तिमाही में अधिक बढ़ोत्तरी नहीं होती, तो अर्थव्यवस्था मंदी में पहले से ही पहुंच जाती। (देखें कोष्टक 2)

Figure 1: संकलित सकल मूल्य का तिमाही आकलन मूल कीमतों पर
(2011-12 की कीमतों पर)

स्रोत: केन्द्रीय सांख्यिकी कार्यालय, भारत सरकार
(Source: Central Statistics Office, Government of India)

आर्थिक सर्वेक्षण 2016-17 खंड 2 के दो आंकड़े[6], आर्थिक गतिविधि पर नोटबन्दी के प्रतिकूल प्रभाव को साफ़ तौर पर उजागर करते हैं। चित्रासंख्या 9 (पेज 12) दिखाती है कि किस तरह वास्तविक निवेश (सकल स्थायी पूंजी निर्माण, अर्थात ग्रॉस फिक्स्ड कैपिटल फॉर्मेशन GFCF) में बढ़ोत्तरी, 2016-17 की चौथी तिमाही (जनवरी-मार्च) में नकारात्मक दायरे में लुढकी। चित्रासंख्या 22 (पेज 23) दिखाती है कि किस तरह नोटबन्दी के बाद मैन्युफैक्चरिंग (औद्योगिक उत्पादन सूचकांक - इंडेक्स आफ इंडस्टियल प्रॉडक्शन या IIP) विकास और औद्योगिक जमाधन की वास्तविक बढ़ोत्तरी दर 2016-17 की आखरी दो तिमाहियों में (अक्तूबर से मार्च) धराशायी हो गयी। 2017-18 की पहली तिमाही (अप्रैल-जून) के ताज़ा आंकड़ें भी निवेश और मैन्युफैक्चरिंग गतिविधि में निरन्तर अपकर्ष/क्षय दिखाते हैं।

तेईस उभरती अर्थव्यवस्थाओं के आधार पर आर्थिक सर्वेक्षण 2016-17 के दूसरे खंड में किये गए विश्लेषण ने स्पष्ट किया है कि किसी भी अन्य अर्थव्यवस्था ने विगत 25 सालों में इस तरह

[6] https://goo.gl/rtrDtT

कोष्टक 2: सेक्टरनुमा तिमाही संकलित सकल मूल्य का अनुमान 2011-12 की मूल कीमतों पर

| श्रेणियां | 2015–16 Q1 | 2015–16 Q2 | 2015–16 Q3 | 2015–16 Q4 | 2016–17 Q1 | 2016–17 Q2 | 2016–17 Q3 | 2016–17 Q4 | 2017–18 Q1 |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| क्रषि, वानिकी और मत्स्यपालन | 2.4 | 2.3 | -2.1 | 1.5 | 2.5 | 4.1 | 6.9 | 5.2 | 2.3 |
| खनन और उत्खनन | 8.3 | 12.2 | 11.7 | 10.5 | -0.9 | -1.3 | 1.9 | 6.4 | -0.7 |
| मैन्युफैक्चरिंग | 8.2 | 9.3 | 13.2 | 12.7 | 10.7 | 7.7 | 8.2 | 5.3 | 1.2 |
| बिजली, गैस, जल आपूर्ति और अन्य उपयोगिता सेवाए | 2.8 | 5.7 | 4 | 7.6 | 10.3 | 5.1 | 7.4 | 6.1 | 7 |
| निर्माण | 6.2 | 1.6 | 6 | 6 | 3.1 | 4.3 | 3.4 | -3.7 | 2 |
| व्यापार, होटल, यातायात और सम्प्रेषण एवं प्रसारण सम्बन्धी सेवाएं | 10.3 | 8.3 | 10.1 | 12.8 | 8.9 | 7.7 | 8.3 | 6.5 | 11.1 |
| वित्त, रीयल इस्टेट और प्रोफेशनल सेवाएं | 10.1 | 13 | 10.5 | 9 | 9.4 | 7 | 3.3 | 2.2 | 6.4 |
| सार्वजनिक प्रशासन, रक्षा और अन्य सेवाएं | 6.2 | 7.2 | 7.5 | 6.7 | 8.6 | 9.5 | 10.3 | 17 | 9.5 |
| संकलित सकल मूल्य मूल कीमतों पर | 7.6 | 8.2 | 7.3 | 8.7 | 7.6 | 6.8 | 6.7 | 5.6 | 5.6 |

Q - Quarterly: तिमाही
स्त्रोत: केन्द्रीय सांख्यिकी कार्यालय, भारत सरकार
(Source: Central Statistics Office, Government of India)

निवेश, निर्यात और जमा धन में इतनी कम व्रद्धि के बावजूद 7 फ़ीसदी बढोत्तरी दर अनुभव नहीं की है। यह स्थिति भारत के सकल घरेलू उत्पाद की बढ़ोत्तरी दर को लेकर बुनियादी किस्म के सवाल खड़े करती है, जिसके बारे में कई अर्थशास्त्रियों का कहना है कि उसका बढ़ चढ़ कर आकलन किया गया है। वित्त मंत्री के बयान में जिन दावों को किया गया है उसके बाबत यही देखने में आया है कि बढ़ चढ़ कर आकलन किए बढ़ोत्तरी के दावों के बावजूद नोटबन्दी के बाद काफ़ी सुस्ती देखने में आयी है।

## भुगतान का डिजिटलीकरण

वित्त मंत्रालय का वक्तव्य नोटबन्दी की कामयाबी के तौर पर अर्थव्यवस्था में नगदी के प्रचलन में आयी कमी को रेखांकित करता है और डिजिटल भुगतान में आयी बढ़ोत्तरी को दर्शाता है:

पूरी तरह पुर्नमुद्रीकरण होने के बाद भी सिर्फ़ 83 फ़ीसदी मुद्रा आज प्रभावी ढंग से

प्रचलन में है ..अक्तूबर 2016 से मई 2017 के दरमियान डिजिटल भुगतान में 56 फ़ीसदी बढ़ोत्तरी हुई है तथा उनकी संख्या 71.27 करोड़ लेन देन से 111.45 करोड़ लेन देन तक पहुंची है।

आर्थिक सर्वेक्षण 2016-17 खंड 2 में नगदी-सकल घरेलू उत्पाद के बीच के अनुपात में आयी कमी को - जो 2015 के 11.3 फ़ीसदी से 2016-17 में 9.7 फ़ीसदी तक पहुंची थी - पहले ही रेखांकित किया था। हालांकि इस सम्बन्ध में दो प्रश्न बचे रहते हैं। सर्वप्रथम, क्या ''पूर्ण पुर्नमुद्रीकरण'' वाकई हो चुका है, यह इस सन्दर्भ में कि मुद्रा की आपूर्ति अर्थव्यवस्था में नगदी की मांग को प्रतिबिम्बित करती है या नहीं! वित्त मंत्रालय के वक्तव्य में किए दावों के विपरीत, उपलब्ध आंकड़ों के आधार पर निष्कर्ष निकालना सम्भव नहीं है, आखिर डिजिटल भुगतान की तरफ़ स्थानांतरण का कितना हिस्सा स्थायी किस्म का और स्वैच्छिक है और कितना नोटबन्दी से पैदा मुद्रा की कमी का है और इसलिए संक्रमणकारी है ? आर्थिक सर्वेक्षण में दिए गए कम सम्पन्न (रूपे कार्ड धारक) और सम्पन्न ग्राहकों के डेबिट और क्रेडिट कार्ड पर लेन देन के आंकड़े नोटबन्दी के बाद दिसम्बर 2016 तक अचानक उछाल दिखाते हैं उसके बाद वह गिरते हैं, मगर इसके बावजूद नोटबन्दी के पहले के कालखण्ड से वह फिर भी अधिक रहते हैं। इस आधार पर कोई सख्त निर्णय तक इतनी आसानी से पहुंचा नहीं जा सकता।

सबसे महत्वपूर्ण मुददा यह है कि क्या नोटबन्दी जैसा जबरदस्त झटका जरूरी था ताकि नगदी इस्तेमाल करनेवालों को डिजिटल भुगतान की तरफ़ भेजा जा सके। हालांकि डिजिटल भुगतान के मुटठीभर सर्विस प्रोवाइडरों के लिए उंचा मुनाफे की गारंटी स्पष्ट ही है, समूची अर्थव्यवस्था और लोगों के लिए इस बदलाव के फ़ायदों का अतिशयोक्तिभरा वर्णन उचित नहीं है। डिजिटलीकरण लेन-देन की सुविधा और पारदर्शिता को बढ़ावा दे सकता है, मगर वह लेन-देन की कीमतों तथा दुरूपयोग की संभावनाओं को भी बढ़ा सकता है। वित्तीय और डिजिटल साक्षरता के भारत के निम्न स्तर और गहरे रूप में असमान सामाजिक-आर्थिक ढांचे को देखते हुए यह खतरा और बढ़ता है। इस मामले में प्रधानमंत्री जन धन योजना पर गौर किया जा सकता है। वित्त मंत्रालय का वक्तव्य कहता है:

सोलह अगस्त 2017 को प्रधान मंत्री जन धन योजना के तहत खोले खातों की संख्या 29.52 करोड़ है जिनमें से ग्रामीण खाते 60 फ़ीसदी है। नोटबन्दी के चलते हुई उठापटक का नतीजा है कि प्रधानमंत्री जन धन योजना के तहत खुले जीरो बैलेन्स खातों की संख्या सितम्बर 2014 के 76.81 फ़ीसदी से अगस्त 2017 के 21.41 फ़ीसदी तक पहुंची है।

कई सारी मीडिया रिपोर्टों में यह बात कही गयी थी कि जन धन योजना के खातों को विभिन्न

राज्यों में ग़ैरक़ानूनी नगदी को जमा करने के लिए  इस्तेमाल किया जा रहा है। (India Today 2016 ; Shankar 2016) यह हक़ीकत कि 99 फ़ीसदी मुद्रा बैंकिंग प्रणाली में लौट आयी है इसी बात को प्रमाण है कि नगदी में जमा अधिकतर काला पैसा बैंक में जमा कर दिया गया है।

राजस्व महकमे के तलाश और जब्ती के आंकड़े दिखाते हैं कि अघोषित आय का लगभग 6 से 8 फ़ीसदी हिस्सा नगदी तथा अन्य तरल सम्पत्ति में भंडारण किया गया है। हालांकि नोटबन्दी के बाद जन धन योजना के जीरो बैलेन्स खातों में तेज़ी से कमी, जिसे वित्त मंत्री ने कामयाबी की कहानी कहा है, को वास्तविकता में नोटबन्दी के बाद काले धन को वैध बनाने के लिए हुए दुरूपयोग के सन्दर्भ में भी देखा जा सकता है। नोटबन्दी के बाद नगदी इस्तेमाल में कमी और डिजिटल भुगतान में बढ़ोत्तरी के चलते काले धन को वैध बनाने के ऐसे रास्तों पर कोई असर नहीं पड़ा दिखता है।

## फ़ायदों से ज्यादा नोटबन्दी की क़ीमत

वित्तमंत्री के बयान में किए दावों के मुताबिक नोटबन्दी के फ़ायदे जहां बहुत मामूली या भ्रामक दिखते हैं, वहीं यह वक्तव्य नोटबन्दी की क़ीमत पर बिल्कुल खामोश रहता है। आर्थिक सर्वेक्षण 2016-17, खंड 1 (अध्याय 3) में नोटबन्दी की निम्नलिखित राजकोषीय कीमतों को पहचाना गया है।

- सामान्य प्रतिस्थापन के अतिरिक्त नए नोटों को छापने की क़ीमत

- मार्केट स्टेबिलायजेशन स्कीम बॉण्डस को जारी करने के माध्यम से, बैंकिंग प्रणाली की नक़दी में आए उछाल (surge in liquidity) को निष्प्रभावी करने की क़ीमत

- आर्थिक विकास में कमी के चलते केन्द्र के कॉर्पोरेट और अप्रत्यक्ष कर राजस्व आय में कमी

रिज़र्व बैंक आफ इंडिया की सालाना रिपोर्ट के मुताबिक रिज़र्व बैंक द्वारा केन्द्र सरकार को भुगतान किया गया अधिशेष वर्ष 2015-16 के 65,876 करोड़ रूपए से लेकर 2016-17 के 30,659 करोड़ रूपए तक पहुंचा। रिज़र्व बैंक आफ इंडिया के अधिशेष में कमी 2016-17 की घटी आय और बढ़े खर्चों के चलते थी, जो नोटबंदी का सीधा परिणाम था। नोटों का छापने की क़ीमत 2015-16 के 3,421 करोड़ रूपए से 2016-17 के 7,965 करोड़ रूपए तक पहुंची, अर्थात 4,544 करोड़ रूपए की बढ़ोत्तरी। यह अतिरिक्त खर्चा इस वजह से हुआ क्योंकि नए मुद्रा नोटों की आपूर्ति का अनुपात पिछले साल की तुलना में 37 फ़ीसदी बढ़ा, जहां उंचे मूल्यवर्ग के नोटों की आपूर्ति 160 फ़ीसदी बढ़ी तथा माल भाडा भी बढ़ा। वर्ष 2016-17 की

तुलना में रिज़र्व बैंक आफ इंडिया को लगभग 18,004 करोड़ रूपए का घाटा हुआ। वजह थी नोटबन्दी के बाद बैंकिंग प्रणाली में अतिरिक्त नगदी के समाहित हो जाने से सूद के भुगतान पर खर्चा बढ़ा था। इसके चलते रिज़र्व बैंक आफ इंडिया ने नोटबन्दी से जुड़ी कीमतों के चलते पिछले साल की तुलना में वर्ष 2016-17 में 22,548 करोड़ रूपए का नुक़सान उठाया।

भले ही हम यह अनुमान लगा लें कि नोटबन्दी के चलते संकलित सकल मूल्य (ग्रॉस वेल्यू एडेड) में 2016-17 में सिर्फ़ 1 फ़ीसदी की कमी हुई, संकलित सकल मूल्य का घाटा लगभग एक लाख करोड़ तक पहुंचता है। अगर हम कर-संकलित सकल मूल्य का अनुपात 9 फ़ीसदी (जैसा कि सेन्टरल स्टैटिस्टिक्स आफिस के 2016-17 के अनुमान बताते हैं) मान लें तो भी सरकार को हुआ कर राजस्व घाटा और 9 हज़ार करोड़ तक पहुंचता है।

निचोड़ के तौर पर कहें तो नोटबन्दी के चलते केन्द्र सरकार ने कमसे कम 31,500 करोड़ रूपया राजस्व के मामले में गंवाया जबकि वित्त मंत्रालय द्वारा दी गयी जानकारी के आधार पर कहें तो उसने सिर्फ़ 4,000 करोड़ रूपए कर राजस्व की वापसी के चलते कमाए। इस तरह हम देख सकते हैं कि सिर्फ़ सरकार को ही 27,500 करोड़ रूपए का घाटा हुआ। निश्चित ही इसके अलावा कई अन्य अहम खर्चे हैं जो निजी क्षेत्रों पर लादे गए, जिससे अर्थव्यवस्था के औपचारिक और अनौपचारिक क्षेत्रों में आमदनी और नौकरियों, दोनों में काफ़ी कमी आयी।

यह हक़ीकत कि नोटबन्दी के ''जबरदस्त लाभकारी'' प्रभाव के बारे में भारतीय जनता को आधिकारिक तौर पर शिक्षित करने के लिए वित्त मंत्रालय ने वही दिन चुना जब रिज़र्व बैंक आफ इंडिया ने समाचार दिया कि 99 फ़ीसदी मुद्रा बैंकिंग प्रणाली में लौट आयी है, हम जिस ''पोस्ट ट्रुथ (truth)'' दुनिया में रह रहे हैं उसी का परिचायक है, जहां सत्ताधारी तबके ने तथ्यगत अचूकता और विश्वसनीयता से अपना मुंह मोड़ लिया है। शेष अर्थव्यवस्था और जनता पर उसके प्रभाव के अलावा आधिकारिक प्रचार के धुंधलके के बावजूद, हालांकि, सच्चाई यही है कि नोटबन्दी की राजकोषीय लागत उसके लाभों से अधिक है।

**प्रसेनजित बोस** कोलकाता में रहनेवाले अर्थशास्त्री है।

यह लेख पहली बार  2 सितम्बर 2017 को Economic and Political Weekly  के खण्ड 52, अंक 35पर प्रकाशित हुआ था।

(प्रकाशित लेख का हिंदी अनुवाद **सुभाष गताडे** ने किया है।)

## संदर्भ:

Ghosh, Soumya Kanti (2016): "Demonetisation and Note Burning," Business Standard, 14 November.

———— (2016a): "Grappling with Demonetisation Windfall," Business Standard, 23 November.

Indian Express (2017): "Official Data for PMGKY: Unaccounted Funds at just Rs 5000 crore," 2 June.

India Today (2016): "Exposed: Crooks Turning Kala Dhan into Jan Dhan," 17 November.

Times of India (2016): "Supreme Court Refuses to Stay Ban on Rs 500, Rs 1000 Notes," 15 November.

————(2016a): "SBI Raises Doubts over Rs 11.5L-cr Deposit," 8 December.

Shankar, V Shiva (2016): "Parallel Economy: Jan Dhan Accounts Used to Launder Money," Times of India, 15 November.

# आर्थिक सर्वेक्षण ने स्वीकारा – नोटबंदी के बाद अर्थव्यवस्था में सुधार अभी भी बाक़ी

आर्थिक सर्वेक्षण के अनुसार नोटबंदी के दूरगामी फ़ायदों का साकार होना बाक़ी है।

-मयंक जैन

कर्नाटक में एक बंद एटीएम, स्रोत: अगस्त्य चंद्रकांत, विकिमीडिया कॉमन्स

सरकार द्वारा भारत के मुद्रा नोटों में से 86% को अचानक वापस ले लेने की घटना को नौ महीनों से अधिक हो चुके हैं, लेकिन भारत के मुख्य आर्थिक सलाहकार अरविंद सुब्रमण्यन अभी भी इसको लेकर निश्चित नहीं हैं कि नोटबंदी से भारतीय अर्थव्यवस्था के किसी भी क्षेत्र को सचमुच कोई मदद मिलेगी। शुक्रवार को संसद में पेश किए गए आर्थिक सर्वेक्षण के ताज़ातरीन अंक में यह बात कही गई है।

हमेशा मुख्य आर्थिक सलाहकार आर्थिक सर्वेक्षण के मुख्य लेखक होते हैं, लेकिन यह सरकार का एक संयुक्त प्रयास होता है, जिसको वित्त मंत्रालय में मौजूद मुख्य लेखकों के नेतृत्व में पूरा किया जाता है। अक्सर ही इसमें चुने हुए भागों की समीक्षा पेश की जाती है, क्योंकि इसका

मकसद अतीत पर एक आलोचनात्मक दृष्टि पेश करना होता है, साथ ही आर्थिक और विकास की दिशाएं पेश करना होता है, ताकि सरकार उन पर निकट और दीर्घकालीन भविष्य में अमल कर सके। ऐसे में इस रिपोर्ट का बड़ी उत्सुकता से इंतजार किया जा रहा था, क्योंकि अरविंद सुब्रमण्यन के लिए यह पहला मौका था जब वे नोटबंदी के असर के बारे में पहले से उजागर हुए आंकड़ों के एक सिलसिले के बाद इस पर अपना जायजा पेश कर सके।

एक तरफ़ जहां उम्मीद की जा रही थी कि आर्थिक सर्वेक्षण का यह ताज़ातरीन संस्करण अधिक व्यापक स्तर के आंकड़ों और सबूतों को पेश करेगा ताकि नोटबंदी की कारगरता के बारे में नतीजे निकाले जा सकें, वहीं ऐसा लगता है कि सुब्रमण्यन जिस अकेले निष्कर्ष पर पहुंच पाए हैं उससे अर्थशास्त्रियों की सबसे बड़ी आशंका की पुष्टि होती है। वह यह कि नोटबंदी ने औपचारिक और असंगठित दोनों ही अर्थव्यवस्थाओं को नुक़सान पहुंचाया है और नौ महीनों के बाद भी, ये उससे पूरी तरह उबर नहीं पाए हैं।

मध्य-कालिक (मिड-टर्म) सर्वेक्षण में सुब्रमण्यन ने कहा है कि नोटबंदी ने अनौपचारिक क्षेत्र को कड़ी चोट पहुंचाई है, भले ही इसके बारे में पर्याप्त आंकड़े नहीं है जो बताएं कि अनौपचारिक अर्थव्यवस्था में काम करने वालों को इस क़दम से कितनी भारी मात्रा में तनाव का सामना करना पड़ा है।

## अनौपचारिक क्षेत्र को नुक़सान

यह मानते हुए कि नोटबंदी के नतीजे में अल्पकालिक नुक़सान उठाने पड़ेंगे, आर्थिक सर्वेक्षण कहता है कि तथ्यों के ज्यादातर स्रोत औपचारिक क्षेत्र के बारे में ही बताते हैं, जो नोटबंदी के झटके से व्यापक तौर पर सुरक्षित था। इसलिए सर्वेक्षण ने अनौपचारिक क्षेत्र की सेहत को देखने के लिए दोपहिया वाहनों की बिक्री को एक पैमाने के रूप में लिया है।

> "अनौपचारिक क्षेत्र पर पड़ने वाले प्रभावों के लिए दोपहिया वाहनों की बिक्री एक पैमाना है, जिसमें नोटबंदी के बाद तेज़ी से गिरावट दिखाई देती है, लेकिन छह महीने से ज्यादा समय के बाद, नोटबंदी के पहले के स्तर पर पहुंच गई है। वास्तविक बिक्री और ट्रेंड लाइन (जारी रुझानों) के बीच कुल खाई बताती है कि अनौपचारिक क्षेत्र को अल्पकालिक तौर पर इसकी क्या क़ीमत चुकानी पड़ी है"।
>
> \- भारत का आर्थिक सर्वेक्षण, खंड दो

सर्वेक्षण में दिए गए तथ्यों के विवरण पर एक क़रीबी नजर डालने पर पता लगता है कि जहां दोपहिया वाहनों की बिक्री अक्टूबर 2016 में (नोटबंदी के पहले) देखे गए स्तर पर क़रीब-क़रीब पहुंच चुकी है, वहीं उसे अभी सितंबर में देखे गए स्तर पर पहुंचना बाक़ी है – जो लोगों के आय के स्तर में वृद्धि के संकेत देने के बजाय यह दिखाता है कि नोटबंदी के असर से उबरने में लंबा समय लगेगा।

इसी के साथ, सर्वेक्षण ने बीमा के लिए मांग का विश्लेषण भी किया है – नोटबंदी के बाद जब परिवारों के सामने नक़दी का संकट आया तो आमदनी के स्रोतों के सूख जाने के बाद उन्होंने बीमा की मांग की होगी। बीमे का मतलब औपचारिक क्षेत्र के कल्याण कोष के साथ-साथ परिवार और दोस्तों के बीच अनौपचारिक लेन-देन भी है।

आर्थिक सर्वेक्षण ने महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी योजना के लिए जिला-स्तरीय आंकड़ों का अध्ययन किया और इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि नोटबंदी की अवधि में सचमुच में काम की मांग में इजाफ़ा हुआ था। ऐसा ख़ास कर कम विकसित राज्यों में हुआ था।

> "नोटबंदी की अवधि (आरंभिक नवंबर 2016 - मार्च 2017) के दौरान बीमे की बढ़ी हुई मांग का संकेत देने वाले सबूत हैं। ख़ास तौर से ये संकेत कम विकसित राज्यों के लिए ज्यादा मज़बूत हैं जिनमें बिहार, छत्तीसगढ़, राजस्थान, झारखंड, पश्चिम बंगाल और उड़ीसा शामिल हैं, जिनमें कुल श्रम दिवसों में 30 फ़ीसदी की बढ़ोतरी देखी गई।"
>
> - भारत का आर्थिक सर्वेक्षण, खंड दो

## अप्रभावित आवासीय क्षेत्र

जब नोटबंदी की घोषणा की गई थी, तो यह उम्मीद की गई थी कि यह अर्थव्यवस्था के अधिक क्षेत्रों को औपचारिक क्षेत्र के भीतर लाकर भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाएगा और रियल एस्टेट परियोजनाओं में ग़ैर क़ानूनी धन के जमा होने को रोकेगा, जिसकी वजह से आवास उद्योग में कीमतें कृत्रिम तरीक़े से ऊंची रहती हैं। इस दिशा में यह सोचा गया था कि बड़े मूल्य के मुद्रा नोटों को वापस लेने से उनके लेनदेन में से ग़ैर क़ानूनी धन वाला हिस्सा हट जाएगा और घरों की कीमतें नीचे आएंगी।

शुक्रवार को पेश किया गया आर्थिक सर्वेक्षण से लगता है कि ऐसा कुछ भी नहीं हुआ है. इसमें कहा गया है कि आवासीय कीमतों में बढ़ोतरी की दर में कमी नोटबंदी के पहले से ही हो रही थी

और नोटबंदी के बाद भी इसमें कमी आई। हालांकि सर्वेक्षण में इसका उल्लेख किया गया है कि कीमतों में एक बार फिर से बढ़ोतरी शुरू हो गई है, और इस तरह कुछ लोगों द्वारा जिसे नोटबंदी से जुड़ी हुई उपलब्धि के रूप में देखा जा रहा था, वह प्रक्रिया अब पलट गई है।

> "नोटबंदी के भी पहले, घरों की कीमतों की वृद्धि की गति में कमी आई थी और नोटबंदी के बाद कीमतों में और भी गिरावट आई। तबसे गिरावट की यह प्रक्रिया उलट गई है और ऐसा लगता है कि कीमतें फिर से चढ़ रही हैं"।

- भारत का आर्थिक सर्वेक्षण, खंड दो

## करों के आधार में व्यापकता, पर करों की उगाही में वृद्धि की संभावना कम

संसद में पेश किए गए आर्थिक सर्वेक्षण के पहले खंड में इसे "मूलगामी, अभूतपूर्व क़दम" कहा गया है, जो भ्रष्टाचार और नक़ली मुद्रा की समस्याओं से निबटेगा और अधिक लोगों को करों के दायरे में लाएगा। एक तरफ़ शुक्रवार को जारी ताज़ा संस्करण बताता है कि नोटबंदी के बाद 5.4 लाख अतिरिक्त लोग करों के दायरे में आए हैं, वहीं ये यह भी कहता है कि वास्तविक कर उगाही में कोई बड़ी मात्रा में वृद्धि शायद न हो।

> "लेकिन यह दिलचस्प है कि नए करदाताओं की बताई गई औसत आय 2.7 लाख है जो करों के दायरे में आने की सीमा 2.5 लाख से बहुत ऊपर नहीं है, इसलिए करों की उगाही पर फौरी असर कम ही होगा। उगाही का पूरा प्रभाव क्रमिक रूप से ही मूर्त रूप लेगा, जब इन करदाताओं की बताई गई आमदनी में वृद्धि होगी"।

- भारत का आर्थिक सर्वेक्षण, खंड दो

## नुक़सान में उद्योग

शुक्रिवार को आर्थिक सर्वेक्षण का दूसरा खंड जारी किया गया, जिसमें संकेत दिए गए हैं कि नोटबंदी से पिछले वित्त वर्ष की तीसरी और चौथी तिमाही में औद्योगिक वृद्धि में मंदी आई। लेकिन शाम तक सरकार द्वारा और अधिक चिंताजनक आंकड़े जारी किए गए, जो दिखाते हैं कि इस साल जून में पिछले चार वर्षों में पहली बार कारखानों की पैदावार में कमी आई है, जैसाकि औद्योगिक उत्पादन के सूचकांक से जाहिर होता है।

जहां एक तरफ़ यह अनुमान लगाया गया था कि उपभोक्ताओं की तरफ़ से मांग में कमी आने

की वजह से उद्योगों पर अल्पकालिक प्रभाव पड़ेगा, अर्थशास्त्रियों का कहना है[7] कि आईआईपी के आंकड़े साबित करते हैं कि भारतीय निर्माता कंपनियों पर नोटबंदी के प्रभाव जारी रहेंगे।

आर्थिक सर्वेक्षण जहां औद्योगिक मंदी पर गौर करता है, वहीं वह यह भी स्वीकार करता है[8] कि सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि के 7.5 फ़ीसदी के प्रस्तावित लक्ष्य को हासिल करना मुश्किल होगा। इसी के साथ, यह औद्योगिक उत्पादन शृंखला के नए सूचकांक पर भी गौर करता है जो मार्च 2017 में ख़त्म हुए वित्त वर्ष की आखिरी दो तिमाहियों में उद्योगों में आई एक मंदी को दिखाता है।

सर्वेक्षण में कहा गया है, "नई शृंखला नोटबंदी के बाद की तीसरी और चौथी तिमाही में औद्योगिक वृद्धि में मंदी को दर्ज करती है, जबकि पुरानी शृंखला समान अवधि में वृद्धि में एक तेज़ी को दिखाती है"।

**मयंक जैन** scroll.in से जुड़े हुए रिपोर्टर हैं।

यह लेख पहली बार 12 अगस्त, 2017 को scroll.in (http://www.scroll.in/) में प्रकाशित हुआ था, जो नीचे दिए गए लिंक पर उपलब्ध है: https://goo.gl/38JN2f

इस प्रकाशित लेख का हिंदी में अनुवाद **रियाजुल हक़** ने किया है।

7 https://goo.gl/d7EK8q
8 https://goo.gl/xeAEAg

# नोटबंदी का भूत

ग्रामीण मराठवाड़ा में, जहां कृषि व्यापार की कड़ी नक़दी पर आधारित है, किसान नवंबर 2016 की नोटबंदी के प्रभाव से अब भी जूझ रहे हैं – बाउंस हो चुके चेक, बैंकों तक कम पहुंच, और फ़सलों की गिरती हुई क़ीमतों से।

- पार्थ एम. एन.

पिछले साल 8 नवंबर को 500 और 1,000 रूपये के नोट बंद हो जाने के दस महीने बाद भी नोटबंदी का भूत दीपक बडावने को परेशान कर रहा है।

नवंबर के आरंभ में, बडावने ने अपने 2.5 एकड़ खेत पर 31 क्विंटल कपास की पैदावार की थी। उन्हें उम्मीद थी कि इससे उनकी अच्छी कमाई होगी। "व्यापारी ने ट्रक का प्रबंध किया और कपास को मेरे घर से ट्रक पर लदवाया," वह बताते हैं। लेकिन तभी, नोटबंदी की वजह से नक़दी की कमी ने कृषि क्षेत्र पर बुरा प्रभाव डाला। दीपक को उनके कपास का पैसा नहीं मिल सका। "व्यापारी अब यह कह रहा है कि वह दीवाली तक (अक्तूबर 2017 के मध्य तक) पैसे दे देगा," वह बताते हैं।

कपास के लिए इस व्यापारी को बडावने को 178,483 रूपये देने हैं। उन्होंने इतनी राशि का जो चेक उससे 24 मार्च को लिया था वह तीन बार बाउंस हो चुका है। "मैं ही अकेला नहीं हूं," महाराष्ट्र के मराठवाड़ा में औरंगाबाद शहर के निकट स्थित कराजगांव में एक पेड़ के नीचे बैठे 31 वर्षीय दीपक कहते हैं। "मेरे गांव में दूसरे लोग भी हैं, जिनके साथ ऐसा ही धोखा किया गया।"

बडावने, जो एक संयुक्त परिवार में रहते हैं और जिनके दो बच्चे हैं, 1,300 लोगों के इस गांव में ऐसे कुछ लोगों को एकत्रित किया, जो अपनी बकाया राशि का इंतज़ार कर रहे हैं या फिर जिन्हें मिलने वाले चेक बाउंस हो गए हैं। नोटबंदी के लगभग छह महीने बाद, अप्रैल में दीपक के 38 वर्षीय भाई जितेंद्र को 34 क्विंटल कपास के बदले लगभग दो लाख रुपये का चेक मिला। लेकिन यह भी बाउंस हो गया। "मैं इसका क्या करूंगा अगर मेरे हाथ में इसका नक़द नहीं आ सका?" वह पूछते हैं। "फ़सल की बुवाई (जो मध्य जून में आरंभ हुई) के लिए मुझे नक़दी की ज़रूरत है।"

नोटबंदी के 100 दिन के विरोध प्रदर्शन में मंच पर एनी राजा (नेशनल फेडरेशन ऑफ़ इंडियन वीमेन), फोटो : जो अत्याली

जून की एक सुबह को जब हम वहां पहुंचे, तो यह व्यापारी संवाददाताओं से बचने के लिए गांव छोड़ कर जा चुका था। इसलिए वह इस मामले में अपनी बात रखने के लिए उपलब्ध नहीं था, और इसीलिए इस कहानी में उसका नाम नहीं लिखा गया है।

नाराज़ लोगों की एक भीड़ जब उसके घर में घुसी, तो उसकी मां ने धमकी दी कि अगर उसके बेटे ने आत्महत्या की, तो इसकी ज़िम्मेदारी उन्हीं लोगों की होगी। "व्यापारी ने कहा कि पैसा चुकाने में देरी की वजह नोटबंदी के कारण नक़दी का उपलब्ध नहीं होना है," दीपक कहते हैं, "लेकिन बुवाई का मौसम हमारे लिए प्रतीक्षा नहीं करता। हमने (लगभग चार किलोमीटर दूर, करमाड पुलिस स्टेशन में धोखाधड़ी के आरोप में) एफआईआर दर्ज करा दी है।"

औरंगाबाद-जालना हाईवे पर स्थित हसनाबादवादी गांव में, 28 वर्षीय अतुल अंतराय भी, नोटबंदी के महीनों बाद, जून में संघर्ष कर रहे थे। पांच एकड़ खेत में उनके पास मौसंबी के 1,000 पेड़ हैं। "मेरे पास एक निजी कुआं और बोरवेल है," वह बताते हैं, "इसलिए मैं अपने आसपास मौसंबी लगाने वाले दूसरे विभिन्न किसानों की अपेक्षा अपने बाग़ को ठीक ढंग से पानी दे पाता हूं।"

नवंबर के पहले सप्ताह में, एक व्यापारी अंतराय के पास आया था और उसने पूरी पैदावार के बदले उन्हें 6.5 लाख रुपये की पेशकश की थी। "मैंने फ़रवरी के आसपास मौसंबी तोड़ने की योजना बनाई थी," वह बताते हैं। "और 30-35 रुपये प्रति किलो के हिसाब से, मुझे उम्मीद थी कि इस फ़सल के 10 लाख रुपये मिल जाएंगे। मैंने व्यापारी से कहा कि मैं उसे बाद में बताऊंगा।"

लेकिन, 8 नवंबर को, सरकार के 'नोटबंदी' के आदेश के बाद, उसी व्यापारी के पास नक़दी पैसे नहीं बचे थे, और क़ीमतें गिरने लगीं। "अंत में मुझे इस पूरी फ़सल के केवल 1.25 लाख रुपये मिले," अतुल कहते हैं। "कहां मैंने यह सोचा था कि मुझे एक किलो के 30-35 रुपये मिलेंगे, और कहां मुझे इस फल को 3 रुपये प्रति किलो के हिसाब से बेचना पड़ा।"

'पिछले नवंबर की नोटबंदी के बाद, मुझे मेरी मौसंबी के 30-35 की जगह केवल 3 रुपये प्रति किलो मिले,' हसनाबादवादी गांव के अतुल अंतराय बताते हैं – इनका वीडियो देखने के लिए नीचे दिए लिंक[9] पर जाएं।

मराठवाड़ा में हर साल, फ़सलों का लेन-देन नक़दी में होता है। अनाज की अपेक्षा कपास और मौसंबी जैसी फ़सलों के पैसे ज़्यादा होते हैं, इसलिए नोटबंदी के बाद, जब नक़दी की कम सप्लाई हो रही थी, तब कपास और मौसंबी पैदा करने वाले किसानों पर इसका असर सबसे अधिक हुआ। नवंबर वह महीना होता है जब मराठवाड़ा के किसान कपास की फ़सल काटते हैं, और यह फ़रवरी-मार्च में साल की पहली मौसंबी की पैदावार से कुछ महीने पहले घोषणा की गई (दूसरी फ़सल प्रायः अगस्त-सितंबर में होती है)।

मूल्य घटने लगे और व्यापारियों के पास किसानों से स्टॉक ख़रीदने के लिए नक़द पैसे नहीं थे। नोटबंदी ने जिस कैशलेस भविष्य का वादा किया था, वह कभी नहीं आया, और ग्रामीण मराठवाड़ा के बहुत से किसानों को यह आइडिया पसंद नहीं आया। "सारे एटीएम शहरों में हैं," बीड ज़िला के अंजनवटी गांव के एक किसान, अशोक येधे कहते हैं, जो सोयाबीन तथा ज्वार की खेती करते हैं। "बैंक जाने या एटीएम तक पहुंचने के लिए हमें कई किलोमीटर तक का सफ़र करना पड़ता है।"

ग्रामीण क्षेत्रों में कुछ ही एटीएम हैं और एक-दूसरे से काफ़ी दूर हैं। रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया (आरबीआई) के (जून 2017 तक के) डेटा के अनुसार, देश भर में कुल 222,762 एटीएम हैं, जिनमें से केवल 40,997 ग्रामीण केंद्रों में हैं। इसका मतलब यह हुआ कि (2011 की जनगणना

[9] https://goo.gl/H1UWWb

के अनुसार) भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में जहां 69 प्रतिशत आबादी रहती है, उनके लिए केवल 20 प्रतिशत ही एटीएम हैं।

ऑल इंडिया बैंक इंप्लाईज़ एसोसियेशन के संयुक्त सचिव, देवीदास तुल्जापूर्कर कहते हैं कि एटीएम के काम करने के समय पर भी विचार करना ज़रूरी है। "शहरों में, नक़दी लगभग हर रोज़ डाली जाती है," वह कहते हैं। "लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों में ऐसा नहीं है, जहां एटीएम शहरों के मुक़ाबले केवल 20 प्रतिशत समय तक ही काम करते हैं।"

इसके अलावा येधे यह भी कहते हैं कि ऑनलाइन लेन-देन महंगा पड़ता है, और एक किसान इस प्रकार के हर एक लेन-देन के लिए अतिरिक्त पैसे नहीं अदा कर सकता। बहरहाल, वह बताते हैं कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था में नक़दी की केंद्रीय भूमिका होती है। "हम एक कृषि मज़दूर को 250 रूपये पेटीएम नहीं कर सकते," वह हंसते हैं। "अधिकतर समय, एक किसान को जैसे ही पैसा मिलता है वह उसे खाद या बीज या फिर राशन या चारा ख़रीदने में ख़र्च कर देता है। ग्रामीण भारत में व्यापार की पूरी कड़ी नक़दी पर आधारित है।"

नवंबर 2016 के बाद नक़दी से होने वाली परेशानी में एक वृद्धि यह भी हुई कि ग्रामीण क्षेत्रों के बैंकों को नए करेंसी नोट सबसे अंत में मिले। कई महीनों तक, आरबीआई ने जिला सहकारी बैंकों में, जहां अधिकतर किसानों के खाते हैं, में जमा किए गए पुराने नोटों को लिया ही नहीं। लातूर जिला सहकारी बैंक के प्रबंध निदेशक, हनुमंत जाधव कहते हैं, "7-8 महीनों तक हमें संघर्ष करना पड़ा, जब जिला के बैंकों में पैसे नहीं भेजे गए और हमारे सारे एटीएम पैसों से ख़ाली हो गए थे।"

'एक किसान कैशलेस नहीं हो सकता,' कराजगांव के दीपक बडावने कहते हैं – वीडियो देखने के लिए नीचे दिए लिंक[10] पर जाएं।

कराजगांव में भी, किसानों का कहना है कि कैशलेस अर्थव्यवस्था का क़दम शहर पर केंद्रित है, जिसके अंतर्गत गांवों में रहने वाली बहुसंख्या को नज़रअंदाज़ किया जा रहा है। "आम तौर से हमें किसी भी स्रोत से नक़दी जिस दिन मिलती है, हम उसका प्रयोग उसी दिन कर लेते हैं," दीपक कहते हैं। "हम अगर हर एक लेन-देन के लिए बैंक से पैसे निकालने जाना शुरू कर दें, तो क्या आप अनुमान लगा सकते हैं कि हमें उस पर कितना पैसा और समय ख़र्च करना पड़ेगा? कैशलेस मुंबई और दिल्ली में सुनने में तो अच्छा लगता है, लेकिन ग्रामीण भारत के लिए यह एक मज़ाक़ है।"

---

[10] https://goo.gl/5VaQMe

दीपक 2016-17 के कृषि सीज़न का बैंक लोन अभी तक नहीं चुका पाए हैं। "करमाड के बैंक ऑफ़ महाराष्ट्र का मैं 1.5 लाख रूपये का क़र्ज़दार हूं," वह बताते हैं। "मैं हर साल यह पैसे वापस चुकाता रहा हूं, इसलिए मैं नए क्रॉप लोन के लिए पात्र हूं। लेकिन इस साल, मैं पैसे नहीं चुका सका और इस तरह डिफ़ॉल्टर बन गया।"

दीपक ने अब एक निजी साहूकार से 3 प्रतिशत मासिक ब्याज दर पर 24,000 रूपये ऋण लिए हैं। उन्होंने इससे पहले भी एक निजी साहूकार से 2 लाख रूपये का क़र्ज़ ले रखा है। उन्होंने इस नए क़र्ज़ को इस वक़्त जारी ख़रीफ़ सीज़न पर लगा दिया है और अपने बैंक लोन का एक हिस्सा वापस किया है। लेकिन वह चिंतित हैं। "कम बारिश की वजह से इस साल फ़सल से बहुत अधिक उम्मीद नज़र नहीं आ रही है," वह कहते हैं।

और हसनाबादवादी गांव में, अतुल को यह चिंता सता रही है कि कहीं इस साल उनका मौसंबी का बाग़ न सूख जाए। "कुंए सूख चुके हैं। बारिश अच्छी नहीं हुई है। फ़सल (साल की दूसरी, अगस्त-सितंबर की) औसत हो सकती है। और चूंकि नोटबंदी के बाद मैंने काफ़ी पैसा खो दिया है, मुझे पौधों को जीवित रखने के लिए पानी ख़रीदना मुश्किल हो रहा है।"

**पार्थ एम एन,** LA Times के वरिष्ठ संवाददाता हैं, मुंबई में रहते हैं और firstpost, Quint, Catchnews व PARI के साथ स्वतंत्र पत्रकार के रूप में जुड़े हुए हैं।

यह लेख पहली बार अंग्रेजी में पीपल्स आर्काइव ऑफ़ रूरल इंडिया पर 15 सितम्बर, 2017 को प्रकाशित हुआ था, जो इस लिंक (https://goo.gl/SY4Yb6) पर उपलब्ध है, व इसका हिंदी अनुवाद 19 अक्तूबर 2017 को प्रकाशित हुआ, जो इस लिंक (https://goo.gl/zkBEF8) पर उपलब्ध है।

इस लेख का हिंदी अनुवाद **डॉ. मोहम्मद कमर तबरेज** ने किया है।

# नोटबंदी ने बुंदेलखण्ड के मजदूर प्रवास के सिलसिले को तोड़ दिया है

जबकि गांव के लोग शहर ले जानेवाली बस यात्रा का किराया नहीं सह सकते हैं, वे लोग जो पहले ही बाहर जा चुके हैं वह खुद अब काम न मिल पाने के चलते गांव लौट रहे हैं।

- अजोय आशीर्वाद महाप्रस्थ

छतरपुर: मध्यप्रदेश के छत्तरपुर - जहां मध्यकाल में बने मशहूर खजुराहो मंदिर हैं - के बीहड़ राजमार्ग से एक घंटे की यात्रा और उसके बाद एक कच्चे रोड पर सुस्त और उबड़-खाबड़ अंदाज़ में यात्रा पूरी करने के बाद आप भगवान गांव पहुंचते हैं। एक तरफ़ छोटी छोटी पहाड़ियां और दूसरी तरफ़ बाढ़  आयी नदी के चलते, इस दूरस्थ गांव तक पहुंचने का दुर्गम रास्ता इस इलाक़े में भ्रमण को मुश्किल बना देता है। भगवान गांव तथा आसपास के लोग अपने काम की योजना छत्तरपुर जानेवाली एक मिनीवैन के इर्दगिर्द बनाते हैं जो दिन में दो बार गांव से गुजरती है।

यह अकल्पनीय लग सकता है कि एक निजी मिल्कियतवाली 45 सीटों वाली बस, जो रोज भगवान (gaon) से देश की राजधानी दिल्ली जाती है (अनुमानतः दूरी 650 किलोमीटर), वह इस इलाक़े में रहनेवाले हजारों लोगों के लिए जीवनरेखा बनी हुई है। अगर यातायात का यह साधन न होता तो यहां के रहनेवाले कई बिना रोज़गार के रह जाते।

कई दशकों तक, भूमिहीन दलित, आदिवासी और आर्थिक तौर पर पिछड़े तबकों का एक हिस्सा - जो बुंदेलखंड में 25 फ़ीसदी से ज्यादा है- ईंटों के भटटों, फैक्टरियों और निर्माण स्थलों पर काम के लिए प्रवास करता रहा है। दिल्ली तथा आसपास के इलाक़े उसके सबसे परिचित ठिकाने रहे हैं। छतरपुर के हर गांव में - जो बुंदेलखण्ड का हिस्सा है - हजारों लोग अपने परिवारों के साथ तक़रीबन साल के आठ महिने के लिए बाहर चले जाते हैं। वह मानसून के दिनों में लौटते हैं जब शहर का श्रमाआधारित काम आम तौर पर बारिश के चलते प्रभावित होता है।

अलग-अलग अनुमानों[11] के हिसाब से बुंदेलखंड में गरीबी रेखा के नीचे रहनेवाले ग्रामीण परिवारों का लगभग 50-70 फ़ीसदी हिस्सा ऐसा है जिसमे कमसे कम एक सदस्य सालाना

[11] https://goo.gl/L23Lfz

प्रवास करता है या उसने स्थायी तौर पर देशांतर किया है। पिछले साल किए गए एक सर्वेक्षण[12] में दिल्ली प्रवास करनेवाले लोगों की संख्या का अनुमान लगभग 18 लाख तक लगाया गया था। काम के लिए मौसमी/सामयिक प्रवास यहां की जिन्दगी का सामान्य हिस्सा हो गया है।

इस निरन्तर यातायात के चलते प्राइवेट बस ऑपरेटर्स रोजाना बुंदेलखण्ड के दूर के गांवों से दिल्ली के लिए बसें चलाते हैं।

''भगवान से निकलनेवाली बस - 45 सीटों वाली जगह में - हर रोज 100 से कम लोगों को नहीं ले जाती है। चूंकि दिल्ली पहुंचने के लिए यह बस ही सबसे आसानी से उपलब्ध है और सबसे सस्ता तरीका है, लिहाजा ज़्यादातर लोग अपने आराम की क़ीमत पर उस पर ही सवार होते हैं।'' भगवान में तैनात एक वन अधिकारी जितेन्द्र ठाकुर बताते है।

हालांकि, आम तौर पर भारी भीड़ से भरी यह बस, जिसमें मौसम के दौरान कभी यात्रियों की कमी नहीं होती थी, उसके लिए अब सीटों को भरना मुश्किल हो गया है। 500 तथा 1,000 रूपये के नोटों पर पाबन्दी के चलते इलाक़े में नगदी की कमी ने प्रवास के स्वरूप को बाधित किया है और यहां की चल/चलायमान आबादी को निराशा के गर्त में ढकेला है।

'' अधिकतर लोगों के पास वह 600 रूपए (एक तरफ़ यात्रा की क़ीमत) भी नहीं है कि वह टिकट ख़रीद सकें। दरअसल, साल की इस कालावधि में, जब यातायात अधिक होता है , हम सीटों का आरक्षण शुरू करते हैं। लेकिन, इस साल हम यात्रियों के लिए तरस रहे हैं। हमारे लिए अपनी क़ीमत वसूलना मुश्किल हो गया है। '' बस के डाइवर धान सिंह बताते हैं।

वे परिवार जो प्रवास करते हैं, वह गांव में मिलनेवाली मजदूरी से काफ़ी अधिक कमाते हैं। भूमिहीन गरीबों के लिए जीवनयापन के लिए खेतमजदूरी या बंटाईदारी, यही तरीक़े उपलब्ध होते हैं। हालांकि सामन्ती अर्थव्यवस्था और प्रचण्ड क्रषिसम्बन्धी संकट ने विगत कुछ दशकों में ''उंची'' जाति के भूमिधर किसानों के हाथों उनके शोषण को तीव्र कर दिआ है।

इस वजह से वह उंची मजदूरी पर शहर में काम करना पसन्द करते हैं। लेबर ठेकेदारों की एक श्र्रृंखला - जो गांव के स्तर से शहर तक फैली है - जो कमीशन के आधार पर संचालित होती है, वह इस बात को सुनिश्चित करती है कि शहर का काम दीर्घकालिक रहे, भले ही वह कितना भी शोषणकारी क्यों न हो।

'' हर हज़ार ईंटों पर, एक श्रमिक को 500 रूपए मिलते हैं। अगर परिवार का हर सदस्य काम करे, जिसमें बच्चे भी काम कर रहे हों, तो पांच जनों का एक परिवार प्रतिदिन 2,500 रूपए

[12] https://goo.gl/YnWKDd

कमा सकता है। शहर में रहने की अधिक क़ीमत के बावजूद, हर परिवार प्रति माह कमसे कम दस हज़ार रूपए बचाता है। हालांकि प्रतिदिन एक हज़ार ईंटें ढालने के लिए कमसे कम 14 घंटा काम करना पड़ता है।'' रवि तोमर बताते हैं, जो पानी के अधिकार की एडवोकेसी के लिए बने समूह ''परमार्थ'' से जुड़े कार्यकर्ता हैं।

उसी तरह, फैक्टरी काम में या निर्माण स्थलों पर उनकी आय भी उन्हें गांव में खेत मजदूरी से अधिक तनखाह दिलाती है। हालांकि प्रवास के चलते उनके बच्चों की पढ़ाई बुरी तरह प्रभावित होती है, मगर एक स्थायी आय की गारंटी इलाक़े के गरीबों के प्रवास के लिए काफ़ी होती है।

नोटबंदी के 100 दिन के विरोध में प्रदर्शन करते लोग, फोटो: जो अथिअली

## नोटबन्दी का प्रभाव

जबकि लोग शहर जाने के लिए जद्दोजहद कर रहे हैं, तमाम ऐसे लोग जो पहले से ही वहां पहुंचे थे घर लौट रहे हैं।

आम तौर पर, लोग तब प्रवास करते हैं जब एक लेबर ठेकेदार किसी ख़ास जगह काम का इन्तज़ाम करता है। लेकिन, पिछले एक माह में, छतरपुर और बगल के टिकमगढ़ जिले में कोई भी लेबर ठेकेदार काम की मांग पूरी नहीं कर सका है। इसका परिणाम यह हुआ है कि कई ऐसे लोग जो नवम्बर-दिसम्बर में प्रवजन/प्रवास करते हैं वह अपने अपने गांवों में बिना काम के फंसे पड़े है।

''लेबर ठेकेदार कहता रहता है कि वह काम ढूंढ रहा है। पन्द्रह दिन हो गए हैं, पर उसने कुछ नहीं बताया है। उसका कहना है कि नोटबन्दी ने शहर के काम को भी प्रभावित किया है।'' छतरपुर के बड़ा मल्लाया गांव का धनीराम राइकवार ने ''द वायर'' को बताया।

वे जिन्हें काम मिला है वह यात्रा तथा छोटे मोटे खर्चों के लिए पैसों का इन्तज़ाम करने के लिए संघर्ष कर रहे हैं। ''हमारे समुदाय में किसी के पास पैसा नहीं है जो उधार लिया जा सके। आम तौर पर ठेकेदार ही शुरूआती खर्चों का इन्तज़ाम करता है मगर इस बार उसने हमें खुद नगदी का इन्तज़ाम करने के लिए कहा है। इसने चीजों को काफ़ी कठिन बनाया है।'' भगवान का पूरण कुमार कहता है।

''अब एकमात्र विकल्प यही बचा है'' उसका कहना है, कि ''बनिया (महाजन) से पैसे उधार लिए जाएं। कइयों ने पहले से ऐसा कर लिया है। बिना आमदनी के यहां रहने के बजाय वही तरीका बेहतर है।''

कर्जे का दुश्चक्र इस इलाक़े में गहरा हो गया है क्योंकि विकल्प के अभाव में, काफ़ी लोगों ने अपने शुरूआती खर्चों के लिए सूद पर पैसे लिए हैं और काफ़ी ऐसा करने की सोच रहे हैं। नोटबन्दी के चलते घनीभूत होते क्रषिसंबंधी संकट[13] से खेती से जुड़े कामों में कमी आयी है और उसने गरीबों को बेहद अप्रत्याशित स्थितियों में ला खड़ा किया है।

## प्रवजन की उलटी दिशा

एक अन्य प्रव्रत्ति दिख रही है कि एक किस्म से प्रवजन की दिशा उलटी हो रही है। बहुत लोग जिन्होंने दिवाली के बाद अक्तूबर महिने में प्रवास किया था, वे अपने अपने गांवों को लौट आए हैं। आम तौर पर होता यही है कि एक बार लोग जब दिवाली में घर छोड़ते हैं वह अगले मानसून के पहले ही लौटते हैं।

''एक टाईम खाना भी नहीं मिल रहा था, '' टिकमगढ़ के कौड़िया गांव की पंचम सौर बताती हैं।

सौर का परिवार, अन्य दस जनों के साथ, हरियाणा के भिवानी के निर्माण स्थल पर प्रवजन कर चुका था। नोटबन्दी ने नगदी की जो कमी पैदा की उसने भुगतान में इतनी देरी शुरू की दी कि सभी को लौटना पड़ा।

''लेबर ठेकेदारों ने कहा कि उनके पास नगदी नहीं है। हम में से कुछ को पुराने नोट दिए, जिन्हें

[13] https://goo.gl/4GEC5j

लेने को कोई तैयार नहीं था। फिर उसने (ठेकेदार ने) हमसे कहा कि हम या तो उधार पर काम करें या 150 रूपए दिहाड़ी लें, जो आम तौर पर 300 रूपए होती है।'' कौडिया के लाखन लाल ने कहा, जिन्होनें सौर के साथ प्रवास किया था।

घटती तनखाह और भुगतान में विलम्ब ने शहरों में श्रम की जबरदस्त कमी पैदा की है, जिससे अधिकतर लोग अपने गांवों की ओर लौट रहे हैं।[14] इसने कामगारों और ठेकेदारों, दोनों को प्रभावित किया है। दो जिले के कमसे कम दस गांवों में जहां ''द वायर'' ने लोगों से मुलाक़ात की, तमाम लोग शहरों से लौट आए हैं, जिसने प्रवजन की उलटी दिशा जैसी स्थिति निर्मित की है।

''कमसे कम हमारे गांव में लोग एक दूसरे की मदद करते हैं। अगर मेरे पास आटा नहीं है तो मैं किसी को पूछ सकता हूं। मगर शहरों में आप को सभी कुछ ख़रीदना पड़ता है। शुरूआत में हम लोगों ने कुछ बचत किए पैसे का इस्तेमाल किया, मगर वही सिलसिला हम चलाते तो होता यही कि हमारे पास कुछ भी नहीं बचता। इसलिए हम लोगों ने सोचा कि वापस लौटना बेहतर विकल्प है।'' लाल ने कहा। अधिकतर लोगों को यह उम्मीद है कि नोटबन्दी से जो विघटन पैदा हुआ है वह जल्द ही समाप्त होगा, ताकि वे फिर से शहरों की ओर लौट सकें।

''जो जाना चाहता है, वो जा नहीं पा रहा, जो गए वो वहां रहना नहीं चाहते।'' कौडिया गांव के मनरेगा (महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी अधिनियम) कार्यकर्ता ओम प्रकाश सौर बताते हैं। सौर का कहना था कि गांव की तरफ़ से नवम्बर के मध्य से मनरेगा काम की मांग की जा रही है मगर मध्यप्रदेश सरकार अप्रभावित है।

धान सिंह, बस चालक, इस बदतर होती स्थिति के सबसे बड़े गवाह हैं। नवम्बर आठ के बाद जल्दी ही उन्होंने खुद नोटबन्दी की मार महसूस करनी शुरू कर दी थी। '''आम तौर पर भगवान से हर यात्रा में हम कमसे कम 24,000 रूपए कमाते थे। मगर नोटबन्दी के बाद हम दस हज़ार रूपए कमाने के लिए तरस रहे हैं। मगर दिल्ली से वापसी की यात्रा में भीड़ काफ़ी बढ़ गयी है और जिसने अभी तक हमें राहत दी है।'' वह बताते हैं।

---

[14] https://goo.gl/ZUd7V6

**अजोय आशीर्वाद महाप्रस्थ**, द वायर में सहायक सम्पादक हैं, जहाँ वे रियलपोलीटिक और उसके प्रभाव के बारे में लिखते हैं। पहले फ्रंटलाइन के साथ काम करते हुए, ये राजनीति, संघर्ष, कला और इतिहास, और किसानों के मुद्दों पर लिखते थे।

यह लेख पहली बार 23 दिसंबर 2016 को The Wire (https://thewire.in/) में प्रकाशित हुआ था, जो दिए गए लिंक पर उपलब्ध है: https://goo.gl/5XNy1h

(प्रकाशित लेख का हिंदी अनुवाद **सुभाष गताडे** ने किया है।)

# जब नोटबंदी ने दिल्ली के अनौपचारिक बाज़ार को नष्ट करते हुए अनौपचारिकता बढ़ाई

नौकरियां जाने के अलावा, मयूर विहार और पुरानी दिल्ली के बाज़ार में नक़द-आधारित लेनदेन के औपचारिक संचालन की प्रक्रिया पर नोटबंदी का ज्यादा असर नहीं पड़ा है।

- दीपांशु मोहन व ऋचा सेखानी

दिल्ली हाट के विक्रेता (फोटो: दीपांशु मोहन)

व्यापारिक वस्तुओं या दृश्यमान वस्तुओं के बाज़ार की गतिशीलता को समझने में औपचारिकता और अनौपचारिकता की अवधारणा और विकासशील वैश्विक दक्षिण (विशेष रूप से दक्षिण एशिया और दक्षिण पूर्व एशिया के भीतर बड़े शहरों) में रहने वाले अरबों लोगों के लिए आजीविका के स्रोत के रूप में उनकी भूमिका, सामाजिक विज्ञान में रोचक शैक्षिक बहसों को आमंत्रित करना जारी रखते हैं।

भारत के दिल्ली जैसे शहरों के भीतर अनौपचारिक क्षेत्र का व्यापक अस्तित्व सड़क - विक्रेताओं की गतिविधियों और स्थानीय साप्ताहिक बाज़ारों – तेहरीबाज़ारों व हाटों – रूप में

व्यापार के वाणिज्यिक बाज़ारों में देखा जाता है।

नवंबर 2016 में 500 और 1000 रुपये के नोटों को बंद किए जाने की घोषणा के बाद, नोटबंदी का सबसे ख़राब प्रभाव पूरी दिल्ली में इन नक़द संचालित अनौपचारिक बाज़ारों में देखा गया। पूर्वी दिल्ली के मयूर विहार के साप्ताहिक बाज़ारों और पुरानी दिल्ली के चांदनी चौक व मीना बाज़ार व चावड़ी बाज़ार, के पुराने बाज़ारों में व्यापारियों और विक्रेताओं के साक्षात्कारों के कुछ महत्वपूर्ण अनुभव देखे जा सकते हैं।

यहां प्रकाशित अनुभवजन्य टिप्पणियां छह महीने के क्षेत्रीय अध्ययन (जो ओ.पी. जिंदल ग्लोबल यूनिवर्सिटी के नए आर्थिक अध्ययन केंद्र द्वारा संचालित किया गया) के आधार पर तैयार की गई हैं। इस अध्ययन का उद्देश्य था नोटबंदी के बाद बाज़ार की गतिविधियों की संचालन गतिशीलता को दिल्ली के कुछ स्थानीय बाज़ारों के संदर्भ में समझना।

## मयूर विहार से अवलोकन

क़रीब एक दशक पहले मयूर विहार में लगभग 13 साप्ताहिक बाज़ार थे। ये बाज़ार अब बढ़कर 280 के क़रीब हो गए हैं। यहां के सबसे बड़े बाज़ारों में से एक है हर बुधवार को डी-पार्क, पांडव नगर के पास लगने वाला साप्ताहिक बाज़ार। यह साप्ताहिक बाज़ार क़रीब ३० साल पहले कुछ व्यापारियों द्वारा सड़कों पर परिधान–उत्पादों के बेचने की शुरुआत से अस्तित्व में आया था।

हालांकि, इस बाज़ार के अधिकतर व्यापारी इस इलाक़े में एक दशक पहले मदर डेयरी संयंत्र (जो बाज़ार क्षेत्र से 100 मीटर से भी कम दूरी पर है) की स्थापना के बाद अनेक उत्पाद बेचने आए थे। इससे इलाक़े में आवासीय विस्तार हुआ और ग्राहकों की मांग बढ़ गई। इस बाज़ार के स्टाल लकड़ी के सपाट छोटे पटरों पर फुटपाथ पर स्थापित किए गए हैं और इसमें न्यूनतम संरचनात्मक समर्थन है। यह बाज़ार हर बुधवार को शाम 4 बजे से 9 बजे के बीच लगता है।

नीचे दी गई तालिका में बाज़ार में बेची जाने वाली मुख्य व्यापारिक वस्तुएं सूचीबद्ध हैं। नोटबंदी के बाद हमने परिधान-विक्रेताओं की संख्या में वृद्धि देखी। ये विक्रेता उत्तर प्रदेश और राजस्थान के ग्रामीण इलाकों से आए प्रवासी समूहों का हिस्सा होने का दावा करते थे।

तालिका 1: मयूर विहार साप्ताहिक बाज़ार में बेची जाने वाली वस्तुएं

| उत्पाद, जिनके कई विक्रेता हैं (चार से ज्यादा) | उत्पाद, जिनके कम विक्रेता हैं (तीन से कम) | उत्पाद, जो सिर्फ़ एक विक्रेता द्वारा ही बेचे जाते हैं |
|---|---|---|
| ठंड के कपड़ों के साथ सूती वस्त्र और महिलाओं के भारतीय परिधान | बेकरी के उत्पाद | आईना |
| होजरी और अन्तःवस्त्र | पास्ता, स्पघेटी, फ़्रयम्स इत्यादि | माउथ फ्रेशनेर्स |
| प्लास्टिक के सामान : बाल्टी, गिलास, कप, बच्चों के खिलौने, और प्लास्टिक के बर्तन | पैक किया अचार | दीया |
| स्टील के बर्तन | लकड़ी के कंघे | हाथ और दीवार की घड़ियां |
| चटाई, डोरमैट, छोटे कालीन और कम्बल | दुर्लभ फल जैसे कीवी, स्ट्रॉबेरी और कटहल | सेट टॉप बॉक्स के लिए रिमोट कण्ट्रोल |

बाज़ार में कार्यरत विक्रेताओं के साक्षात्कारों से प्राप्त कुछ महत्वपूर्ण निष्कर्ष

• बाज़ार में काम करने वाले अधिकतर व्यापारी उत्तर प्रदेश के ग्रामीण इलाकों के प्रवासी समूहों का हिस्सा हैं, जो अक्सर पूरे हफ़्ते अलग-अलग दिन दिल्ली में विभिन्न साप्ताहिक बाज़ारों में अपना उत्पाद बेचते हैं। अध्ययन रिपोर्ट में, हम उन्हें अस्थायी विक्रेता कहते हैं। परिधान उत्पादों की बिक्री करने वाले विक्रेता अक्सर पुरानी दिल्ली के चांदनी चौक और चावड़ी बाज़ार के बाज़ारों से यह सामान ख़रीदते हैं और न्यूनतम लाभ के अंतर पर बिक्री को अधिकतम करते हैं।

• नोटबंदी के बाद, ज्यादातर विक्रेताओं के लिए सड़क-विक्रय का व्यवसाय लगभग एक महीने तक ठप रहा। इस दौरान ख़रीद या बिक्री के लिए उपलब्ध सीमित नक़दी की वजह से साप्ताहिक बाज़ार बंद थे। हालांकि, मार्च 2017 (घोषणा के तीन महीने बाद) के बाद, विक्रेताओं की बढ़ती उपस्थिति की वजह से बाज़ार की गतिविधि में बढ़ोतरी हुई है। छोटी मुद्रा नोटों (20 रुपये, 50 रुपये और 100 रुपये) की अनुपस्थिति में कुछ विक्रेताओं ने सामान बेचने के लिए कम क़ीमत के उत्पादों का इस्तेमाल, उसके बदले देने के लिए किया (ताकि ग्राहकों

को छोटी मुद्राओं के नहीं होने पर सामान दे सकें)। इसी तरह का अवलोकन भारत-भूटान सीमा क्षेत्र (दिसंबर 2016) में किए गए पिछले अध्ययन में दर्ज किया गया था।

• समान उत्पाद (जैसे सूती परिधान, प्लास्टिक के सामान या स्टील के बर्तन) बेचने वाले व्यापारियों की संख्या उपभोक्ताओं के लिए बढ़ते-घटते मूल्यों के दायरे को प्रभावित करने के लिए सौदेबाज़ी की शक्ति को आकार देती । ऐसा लगता है कि किसी को भी बेचे जाने वाले उत्पाद की वास्तविक क़ीमत नहीं पता है और अधिकतर खरीदारी मांग-पूर्ति के पारंपरिक ढांचे (विक्रेताओं की संख्या और उपभोक्ताओं के उत्पाद ख़रीदने की इच्छा की तुलना में) पर निर्भर है, बिना किसी अप्रत्यक्ष कर व मूल्यों में किसी प्रकार की सीमा की भूमिका के।

• नीचे दी गई तालिका से बाज़ार में व्यापारियों द्वारा बेचे जाने वाले उत्पादों के लिए सूची प्रबंधन की श्रृंखला प्रक्रिया का विवरण देते हुए एक सामाजिक नेटवर्क विश्लेषण नक्शा मिलता है।

तालिका 2: साप्ताहिक बुधवार बाज़ार में व्यापारियों द्वारा बेचे जाने वाले माल की श्रृंखला

**थोक विक्रेता:** चांदनी चौक, सदर बाज़ार, त्रिलोकपुरी के थोक बाज़ार से विक्रेता इकट्ठा सामान ख़रीदते हैं।

→

**पहुंच:** सार्वजनिक परिवहन ऑटो रिक्शा, या निजी वाहनों से विक्रेता इन सामानों को ले जाते हैं।

→

**भंडारण:** विक्रेता इन सामानों को अपने घरों में रखते हैं और बुधवार बाज़ार में ठेले पर लेकर आते हैं।

→

**अंतिम ग्राहक :** हर साप्ताहिक बाज़ार – बुधवार बाज़ार – में सामान ग्राहकों को बेचे जाते हैं।

सूची प्रबंधन की प्रक्रिया में, बाज़ार के पहलू (जैसे माल खरीदारी की सूची, माल वितरण की सूची और माल सूची का प्रबंधन) और बिक्री, आपूर्ति श्रृंखला प्रबंधन के व्यावसायिक विद्या में एक प्रमुख विषय क्षेत्र है। हालांकि, आपूर्ति श्रृंखला प्रक्रियाओं और प्रभावों में अधिकांश

अध्ययन, अर्थव्यवस्था के औपचारिक, विनियमित क्षेत्रों (विनिर्माण, तेज़ी से बढ़ते उपभोक्ता वस्तुओं या ई-कॉमर्स) पर केंद्रित रहती हैं।

बाज़ार में नोटबंदी के प्रभाव का आकलन करने के दौरान, अर्थशास्त्रियों द्वारा सामना की जाने वाली सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक, नक़दी की अर्थव्यवस्था के हिस्सों में नक़दी की कमी के प्रभाव को जाहिर करता है गतिशीलता और अनौपचारिक बाज़ारों के पैमाने पर उपलब्ध सीमित आंकड़े से सांख्यिकीय अल्पकालिक प्रभाव का वास्तविक अनुमान लगाने में असमर्थता से जाहिर होता है। मयूर विहार में बेचे जाने वाले सामानों के सूची प्रबंधन पर अल्पकालिक प्रभाव ने बाज़ार गतिविधि (नक़दी की कमी के दौरान) पर गहरा असर दिखाया, लेकिन यह 6-8 सप्ताह की अवधि के लिए सीमित था। हालांकि, मध्य अवधि में, (घोषणा के आठ हफ़्ते बाद), हमने देखा कि कैसे पूर्वी दिल्ली में अपने एजेंटों (व्यापारियों के वर्तमान) सहित अनौपचारिक बाज़ार का आधार तेज़ी से विस्तारित हुआ।

इस अवलोकन के समर्थन में मुख्य कारणों में से एक है लोगों का शहर (अपेक्षाकृत कम कौशल के साथ) में तेज़ पैमाने पर प्रवासन, जो संगठित क्षेत्र के भीतर किसी भी अवसर के अभाव में छुपी हुई आर्थिक प्रणाली द्वारा अवशोषित हो रहे हैं।

## पुरानी दिल्ली से अवलोकन

पुरानी दिल्ली (मीना बाज़ार, चांदनी चौक और चावड़ी बाज़ार) के बाज़ारों के अध्ययन के दौरान, हमने लगभग 30 व्यापारियों से मुलाक़ात की जो कांसे के नक़ल जवाहरात, पुरानी किताबें, परिधान व प्लास्टिक के सामान से लेकर पुरानी मशीनों के सामानों के उत्पाद बेचते हैं। पुरानी दिल्ली क्षेत्र के बाज़ारों की स्थानिक स्थिति मुग़ल काल के ऐतिहासिक महत्व पर आधारित है, जब जामा मस्जिद का निर्माण शाहजहां के शासनकाल में किया गया था। पुरानी दिल्ली (चांदनी चौक के पास स्थित) में किताबों के बाज़ार जैसे बाज़ार पिछले 100 सालों से चल रहे हैं और यहां 1947 में देश के विभाजन के बाद व्यापारियों और पुस्तक विक्रेताओं का एक बड़ा प्रवाह देखा गया है।

मीना बाज़ार में साक्षात्कार किए गए ज्यादातर विक्रेताओं की दुकानें 1970 के दशक की हैं जब वे शहर में आए थे। अभी भी इनके पास अपंजीकृत दुकानें हैं जो पूरी तरह से नक़दी आधारित व्यवसाय मॉडल पर चल रही है।

नीचे जामा मस्जिद के पास मोटर बाज़ार में बिकने वाले स्क्रैप टूल्स व पुरानी मशीनों के सामान की सूची प्रबंधन पर पूर्ति श्रृंखला का सांचा दिया हुआ है।

**कच्चा माल:** औज़ारों के लिए रद्दी माल दिल्ली और इसके आसपास के ऑटोमोबाइल कारखानों से लिया जाता है।

⇒

**पंहुच :** रद्दी माल को टेम्पो, विक्रेता के निजी वाहनों, या ठेलों से पुरानी दिल्ली के बाज़ार में लाया जाता है।

⇒

**विनिर्माण:** विक्रेता ऑटोमोबाइल कारखानों से रद्दी माल लेकर तथा उसे दोबारा डिज़ाइन कर काम में आने वाले औज़ार बनाता है।

⇓

**अंतिम ग्राहक:** थोक विक्रेता इन दोबारा डिज़ाइन हुए औज़ारों को अंतिम ग्राहक, मतलब ख़ुदरा विक्रेता, को बेचते हैं।

पुरानी दिल्ली में कुछ विक्रेता अपनी मशीनें पुणे, बेंगलुरु और गांधीनगर जैसे भारत के विभिन्न हिस्सों से व साथ ही जर्मनी, अमेरिका और ब्रिटेन जैसे देशों से भी खरीदा करते हैं। इसी तरह, चावड़ी बाज़ार में कांसे के सामान और नक़ली गहने वाले विक्रेता आगरा और उसके आसपास के गांवों से अपने सामान ख़रीदते हैं। यह सामान उन्हें लगभग 40-50 रुपये प्रति किग्रा लागत पर मिलता है। वे टेम्पो का उपयोग कर इन सामानों का परिवहन करते हैं। ये सामान तब ख़ुदरा विक्रेताओं को बेच दिए जाते हैं, जो उन्हें थोक में ख़रीदते हैं।

पुरानी दिल्ली में बाज़ारों के अध्ययन का एक और दिलचस्प पहलू पुरानी किताबों के बाज़ार की परिचालन गतिशीलता में देखा जाता है, जहां ग्राहक, आम तौर पर छात्र, ख़ुदरा विक्रेताओं को सस्ती क़ीमत पर किताब बेचते हैं, फिर से किसी और को बेचते हैं (और यह औपचारिक लेखा प्रणाली से बाहर है)। पुरानी किताबों की बिक्री का राजस्व आकार बहुत बड़ा है और यह बढ़ता रहा है। ख़ुदरा विक्रेताओं को बेची गई किताबों की बिक्री मूल्य किताब के संस्करण, किताब के लेखक और किताब की मांग पर निर्भर करता है। ये कारक ख़ुदरा मूल्य का निर्धारण करने में सहायता करते हैं। ख़ुदरा विक्रेता या पुस्तक विक्रेता फिर ये किताबें ग्राहकों को कम से कम 50 प्रतिशत के लाभ पर बेचते हैं।

बेशक, ये सभी लेनदेन और पुरानी दिल्ली के बाज़ारों में गतिविधियां एक अनौपचारिक, अनियमित व्यवस्था का हिस्सा हैं। नोटबंदी के बाद के परिदृश्य में, हमारे अध्ययन के दौरान निम्नलिखित कुछ अवलोकन किए गए :

पुरानी दिल्ली के क्षेत्र में स्थित अधिकांश बाज़ार नोटबंदी के बाद सबसे ज्यादा प्रभावित हुए। चावड़ी बाज़ार, चांदनी चौक, मीना बाज़ार, मोटर बाज़ार, फूल बाज़ार और पुस्तक बाज़ार में लगभग सभी आर्थिक लेन-देन नक़द आधार पर हैं। यहां व्यापारियों को प्रतिदिन–आधार पर अपने बाज़ार परिचालन को फिर से शुरू करने में महीनों लग गए।

मयूर विहार के मामले के विपरीत, बाज़ारों ने मध्यम अवधि में (घोषणा के बाद 8 से 12 सप्ताह के भीतर) कारोबार की हानि की सूचना दी। कुछ व्यापारियों के लिए आर्थिक आजीविका की हानि गंभीर थी, विशेष रूप से उनके लिए जो जल्दी ख़राब होने वाली वस्तुओं (जैसे फल, खाने वाली वस्तुएं और बेकरी उत्पाद) का व्यवसाय करते हैं ।

मध्य मार्च के बाद ही एक उचित उपभोक्ता मांग के साथ फिर से नक़दी प्रवाह (नए 2,000 और 500 रुपये के नोटों के रूप में) से कारोबार में सुचारुपन आया। हालांकि, ज्यादातर व्यापारियों ने शिकायत की कि पर्याप्त छोटे मुद्रा-नोट नहीं होने की वजह से उन्हें कुछ वस्तुओं को मुद्राओं की जगह देने के लिए मजबूर होना पड़ा (मयूर विहार के मामले के जैसा)।

इन बाज़ारों में माल बेचने वाले व्यापारियों की संख्या में व्यापार के पैमाने पर पिछले छह महीनों में बढ़ोतरी हुई है और अधिक व्यापारियों के रूप में परिधान उत्पादों, प्लास्टिक व स्टील के बर्तन बेचने वाले विक्रेता बढ़े। इन बढ़ते-घटते विक्रेताओं में से अधिकतर प्रवासी व्यापारिक समूहों का हिस्सा हैं, जिसमें समूह के सदस्य सप्ताह के विभिन्न दिनों में पूरे शहर में उत्पादों की बिक्री करते हैं। पुरानी दिल्ली में, हमने उपभोक्ताओं तक आसानी से पहुंच बनाने के लिए अधिकतर विक्रेताओं को मेट्रो स्टेशनों के बाहर सामान बेचते देखा।

## शहरी अनौपचारिकता पर एक सम्मिलित दृष्टि

किए गए अवलोकनों से यह स्पष्ट है कि इन अनौपचारिक बाज़ारों में व्यावसायिक व्यापार पर नोटबंदी के सदमे जैसा प्रभाव के बावजूद, औपचारिक क्षेत्र में रोज़गार के अवसरों की कमी परिणामस्वरूप बाज़ार की गतिविधियों में बढ़ती हुई अनौपचारिकता से जुड़ी हुई है, जो दोनों पलायन समुदायों और पारंपरिक व्यापारिक समुदायों के लिए दिखाई दे रही है।

अनौपचारिक बाज़ारों के संदर्भ में, पहचान की गई बाज़ार व्यवस्थाओं में नक़दी–आधारित लेनदेन की विनियामक प्रक्रिया को औपचारिक रूप में प्रत्याशित करने के ऊपर नोटबंदी का शायद ही कोई असर था। इसके विपरीत, घोषणा के अल्पकालिक माध्यमिक प्रभाव से बाज़ार की गतिविधि में भारी गिरावट आई जिससे ज्यादातर व्यापारियों की आर्थिक आजीविका प्रभावित हुई। काली अर्थव्यवस्था को रोकने के लिए एक क्रांतिकारी आर्थिक सुधार के रूप में, नोटबंदी को एक बड़ी घटनात्मक विफलता के रूप में देखा जा सकता है। नोटबंदी से भारत की औपचारिक अर्थव्यवस्था संरचना पर कोई सकारात्मक प्रभाव पड़ा, ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है। दूसरी तरफ़, इस उत्साही आर्थिक प्रयोग के कारण नकारात्मक प्रभावों व इसके सम्बन्ध पर पर्याप्त सबूत हैं। हमारे अध्ययन के परिणाम इस परिस्थिति को पुनः पुष्टि करने में सहायता करते हैं।

दिल्ली के अधिकतर बाज़ारों में बड़े अनौपचारिक पैमाने पर शहर के क्षेत्र में रहने वाले 60% से अधिक लोगों को शामिल करते हुए बहुत कम बुनियादी संरचनात्मक सुविधाओं के साथ (भूमि आवंटन के मामले में, बिजली, पानी जैसी आवश्यक सुविधाओं, आदि) काम किया जाता है। शहरी नियोजन के तरीकों में सशक्तता की कमी और राज्य की तरफ़ से मौजूदा नीति प्रवचन जिम्मेदार है। इसी समय, ख़राब नौकरी सृजन (औपचारिक क्षेत्र समूहों के बीच) के समय में, एक अप्रभावी कौशल विकास प्रक्रिया और एक शैक्षिक दर्जे से प्राप्त कौशल और उद्योगों द्वारा मांगे कौशलों के बीच बढ़ते अंतर, के समय में आगे के वर्षों में शहरों में व्यावसायिक गतिविधियों की अनौपचारिकता के बढ़ने की भविष्यवाणी की जा सकती है।

नीति निर्देशों के संदर्भ में, नीति निर्माताओं (विशेषकर शहरी स्थान और योजनाओं के अध्ययन) द्वारा औपचारिक, संगठित बाज़ार की स्थापना के बाहर इस तरह के बाज़ार को देखने के लिए द्वैतवादी नीति दृश्य का उपयोग करने के बजाय शहरी अनौपचारिकता को एक समावेशी तरीक़े से देखने की बहुत आवश्यकता है। पारम्परिक रूप से इस्तेमाल किए जाने वाले अर्थमिति तरीकों से परे जाने वाली व्यक्तिपरक, नृवंशविज्ञान अनुसंधान विधियों का उपयोग, पॉलिसी मूल्यांकन में आवश्यक है। मिश्रित अनुसंधान विधियों के अधिक से अधिक उपयोग को सार्वजनिक नीति विश्लेषण, मात्रात्मक आंकड़ों (माध्यमिक रूप में उपलब्ध हैं) के साथ सर्वेक्षण-आधारित साक्षात्कार के एक बड़े नमूने के लिए मिलकर प्रकृति को समझने और शहरी अनौपचारिकता के रूप में अंतर करने के लिए महत्वपूर्ण है।

**दीपांशु मोहन**, ओपी जिंदल ग्लोबल यूनिवर्सिटी में सेंटर फॉर न्यू इकोनोमिक स्टडीज में अर्थशास्त्र के सहायक प्रोफ़ेसर और कार्यकारी निर्देशक हैं, और ऋचा सेखानी, आईसीआरईआर, नई दिल्ली की पूर्व शोधकर्ता हैं।

यह लेख पहली बार 21 जुलाई 2017 को The Wire (https://thewire.in/) में प्रकाशित हुआ था, जो दिए गए लिंक पर उपलब्ध है: https://goo.gl/Pvyzxs

(प्रकाशित लेख का हिंदी अनुवाद **अमित कुमार** ने किया है।)

# सुनियोजित एवं वैधिक लूट
## नोटबंदी के एक साल का सिंहावलोकन

नोटबंदी के फैसले और उससे सर्वत्र हुई तबाही पर हर कोई निराश ही हो सकता है। 8 नवंबर 2016 को सत्तासीन राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (राजग) सरकार द्वारा 500 एवं 1000 रुपये के नोटों के विमुद्रीकरण के ऐतिहासिक फैसले के एक साल पूरे हो जायेंगे। पिछले एक साल में इस तुगलकी फरमान के अनेक वीभत्स परिणाम सामने आये हैं – जो की समाज के विभिन्न समुदायों– विशेषकर गरीब और हाशिये पर पड़े लोगों पर; और अर्थनीति पर, हैं। यही नहीं, मोदी सरकार नोटबंदी की घोषणा करते समय अपने 'घोषित लक्ष्यों' को पाने में भी पूर्णतः असफल हुई है।

इस पुस्तिका के संकलन का अहम उद्देश्य जनता और अर्थव्यस्था पर पड़ने वाले इन्हीं दीर्घकालिक प्रभावों को सामने लाना है जो की अभी तक महसूस किए जा रहे हैं। यह पुस्तिका इस विचारोत्तेजक दलील के साथ शुरू होती है कि नोटबंदी के पीछे का असल कारण, सरकार द्वारा बताये गए उद्देश्य ना होकर, 2008 में आये आर्थिक संकट के बाद "नकद धन के ऊपर शुरू हुई जंग" है। पुस्तिका में सरकार द्वारा नोटबंदी के लक्ष्यों को बार–बार बदलने की घोषणाओं को कालक्रमबद्ध कर सरकार की सफलता के दावों की असलियत की पड़ताल की गयी है। सबसे अंत में इस फैसले के कृषि, प्रवासी मजदूरों, अनौपचारिक अर्थव्यवस्था, और आर्थिक विकास इत्यादि पर पड़े प्रभावों को विश्लेषित किया गया है।

कड़वा सच यह है कि आज भी काला धन खत्म नहीं हुआ है, 2000 रुपये के जाली नोट प्रचलन में आ चुके हैं, और आतंवादियों की फंडिंग और वारदातें अभी भी जारी है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि लोग अभी भी नोटबंदी के सदमे से उभर नहीं पाए हैं और भारतीय अर्थव्यवस्था नोटबंदी और जीएसटी की दोहरी मार से घायल है।

CFA
Centre for Financial Accountability
सेंटर फॉर फाइनेंशियल अकाउंटेबिलिटी